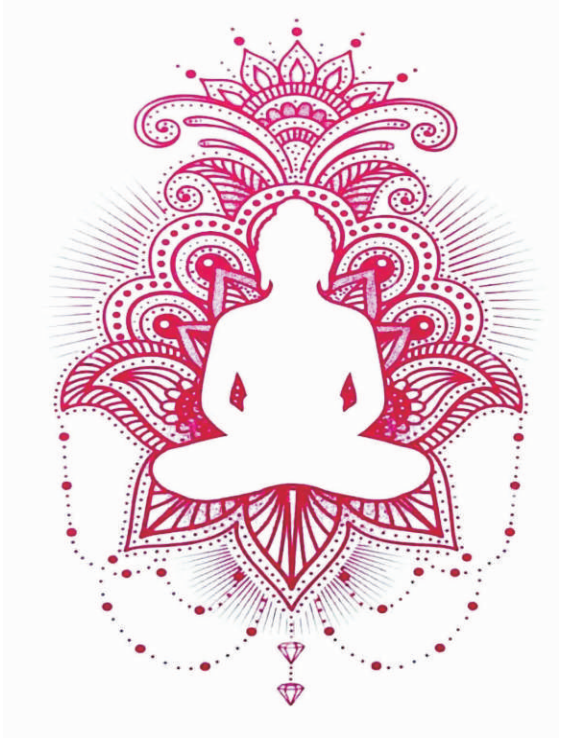
चिन्तन के मोती



लेखक :

जस्टिस नगेन्द्र कुमार जैन

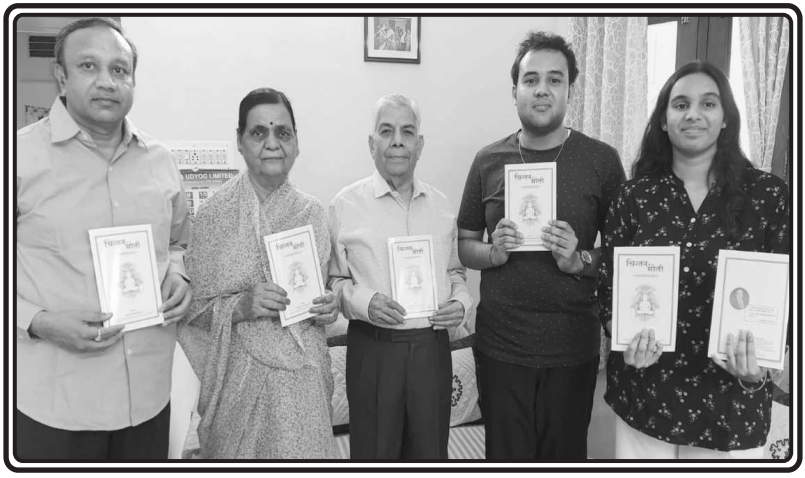
(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

अपने पड–दादा, पड–दादी की मधुर स्मृति में प्रकाशित

लघु पुस्तिका

“ चिन्तन के मोती ”

का विमोचन



अपने नाना–नानी श्री निर्मल कुमार जी जैन,

श्रीमती रूक्मिणी देवी जैन एवं पिता श्री गौरव जैन

‘प्रकाशक’ द्वारा प्रकाशित लघु पुस्तिका

“ चिन्तन के मोती ”

का विमोचन मुदित जैन, एडवोकेट व तान्या द्वारा

आज दीपावली के शुभ अवसर पर दिनांक

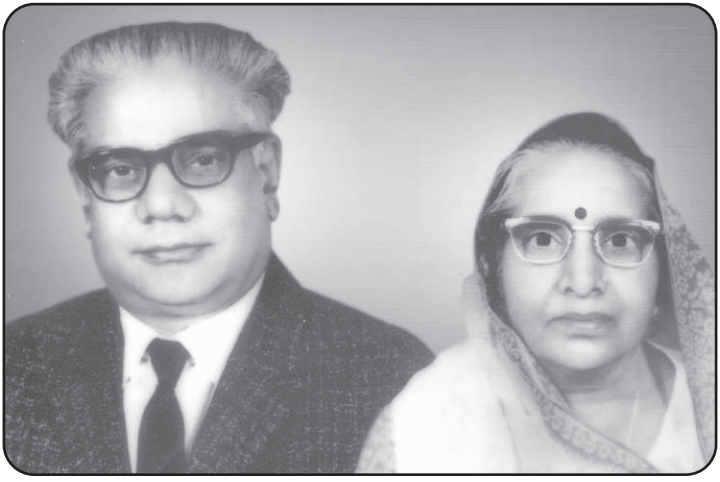
08/11/2026 को किया गया।

चिन्तन के मोती

–: लेखक :–

जस्टिस नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)



न्यायमूर्ति स्व. श्री जे.पी. जैन
(15.11.1917 : 17.9.1975)

स्व. श्रीमती पुष्पा जैन
(12.4.1922 : 19.7–1999)

की पुण्य स्मृति में

सादर समर्पित

–: प्रकाशक :–

गौरव जैन (एडवोकेट)

आर–3, तिलक मार्ग, सी.बी.आई ऑफिस के पास,
सी–स्कीम, जयपुर–302005

मो.: 9828016558



अभिनंदन एवं शुभकामना

आदरणीय जस्टिस नगेन्द्र कुमार जैन द्वारा अपने जीवनानुभवों, सामाजिक सरोकरों, पारिवारिक मूल्यों एवं सांसकृतिक चिंतन को लेखनी के माध्यम से संकलित **''चिंतन के मोती''** का प्रकाशन करना अत्यंत सराहनीय एवं प्रेरणादायी प्रयास है। श्री जैन के लेखों में जीवन के अनुभवों के साथ समाज को सकारात्मक दिशा देने की भावना परिलक्षित होती है। सामाजिक, पारिवारिक एवं सांस्कृतिक विषयों पर उनका चिंतन हमें आत्ममंथन करने तथा अपने जीवन में संस्कारों, नैतिक मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं को अपनाने की प्ररेणा देता है।

आज का युवा वर्ग शिक्षा, रोजगार एवं आधुनिकता की नई ऊँचाईयाँ छू रहा है। यह प्रगति स्वागत योग्य है, किंतु इसके साथ अपनी भारतीय संस्कृति, पारिवारिक एकता एवं नैतिक मूल्यों को सुरक्षित रखना भी आवश्यक है। आधुनिकता तभी सार्थक है, जब वह संस्कारों से जुड़ी रहे। श्री जैन जी की लेखनी इसी महत्वपूर्ण संदेश को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती है।

समाज सेवा के साथ अपने विचारों एवं अनुभवों को साहित्य के माध्यम से समाज तक पहुँचाना उनके सामाजिक सरोकारों और रचनात्मक दृष्टिकोण का परिचायक है। निःसंदेह यह प्रकाशन पाठकों के लिए प्रेरणा, चिंतन एवं मार्गदर्शन का माध्यम बनेगा।

इस सार्थक एवं प्रेरणादायी साहित्यिक प्रयास के लिए जस्टिस नगेन्द्र कुमार जैन को हार्दिक बधाई एवं अभिनंदन।

ईश्वर से प्रार्थना है कि उन्हें उत्तम स्वास्थ्य, दीघायु एवं निरंतर सक्रिय रहने की शक्ति प्रदान करें तथा उनकी लेखनी सदैव समाज में संस्कार सद्भाव और सकारात्मक चिंतन का प्रकाश फैलाती रहे।

दिपावली की हार्दिक शुभकामनाओं सहित :
दिनांक 8.11.2026

(के.के. धोंकरिया)
समाचार विचार संस्थान, जयपुर.मो.: 9269840803

अनुक्रमणिका

1.	राखी की खुशी और सूनी कलाई की खामोशी	1-4
2.	शक्ति हाथ में हो, फिर भी मुरली बजे तो वह कृष्ण है	5-10
3.	पर्युषण पर्व और क्षमावाणी : विचार से आत्मविजय तक	11-15
4.	क्या यह युग फिर एक श्री राम या श्री कृष्ण की प्रतीक्षा में है	16-17
5.	एक बीज से वृक्ष तक–जीवन भर परोपकार	18-20
6.	देश का युवा : समस्याएँ पलायन और समाधान	21-23
7.	विदेशी चमक में बुझते संस्कार	24-25
8.	सकारात्मक सोच–जीवन की सबसे बडी शक्ति	26-27
9.	पर्वो का उद्देश्य : विभाजन नहीं मिलन	28-29
10.	रिश्तों की खुशबू जीवन का सुकून	30-31
11.	संगति का प्रभाव	32-33
12.	विश्वास और संदेह का रिश्तों पर प्रभाव	34-35
13.	शब्दों की शक्ति और रिश्तों की गरिमा	36-37
14.	ड्यूटी और कर्त्तव्य में सामंजस्य	38-42
15	मोबाइलः बच्चों के लिए वरदान या अभिशाप ?	43
16.	Fading Indian Values in the Glare of Foreign Culture	44-45



राखी की खुशी और सूनी कलाई की खामोशी

जस्टिस नगेन्द्र कुमार जैन
(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

रक्षाबंधन आते ही हर ओर एक अलग ही उल्लास दिखाई देने लगता है। बाजार रंग–बिरंगी राखियों से सज जाते हैं। बहिनें अपने भाइयों की कलाई पर राखी बांधने के लिए उत्साहित होती हैं और भाई भी अपनी बहिनों के लिए उपहार लेकर घर पहुँचने की तैयारी करते हैं। कहीं हँसी–मजाक होता है, कहीं बचपन की शरारतें याद की जाती हैं और कहीं भाई–बहिन पुराने गिले–शिकवे भूलकर एक दूसरे को गले लगा लेते हैं। लेकिन इसी उत्सव के बीच कुछ ऐसे भाई भी होते हैं जिनकी कलाई पर राखी बाँधने वाली कोई बहिन नहीं होती। उनके लिए रक्षाबंधन का दिन दूसरों से कुछ अलग होता है। बाहर से ये सामान्य दिखाई देते हैं, मुस्कुराते हैं, दूसरों को शुभकामनाएँ भी देते हैं, लेकिन मन के किसी कोने में एक खालीपन चुपचाप बैठा रहता है।

बहिन का होना केवल राखी बाँधना नहीं है:

बहिन केवल वह नहीं होती जो साल में एक दिन भाई की कलाई पर राखी बाँध दें। बहिन तो बचपन की वह साथी होती है जिसके साथ छोटी–छोटी बातों पर झगड़ा भी होता है और थोड़ी देर बाद उसी के साथ खेलना भी शुरु हो जाता है। कभी वह भाई की शिकायत माँ से करती है, कभी उसकी गलती छिपाती है। कभी भाई को डाँटती है तो कभी किसी दूसरे के सामने उसी भाई का पक्ष लेती है। बचपन में जिन बातों पर भाई–बहिन लड़ते हैं, बड़े होने पर वही यादें जीवन की सबसे प्यारी पूँजी बन जाती हैं।

जिस भाई की कोई बहिन नहीं होती, वह जब किसी दूसरे भाई–बहिन को आपस में प्यार से लड़ते–झगड़ते देखता है तो उसके मन में एक अजीब सी अनुभूति होती है। वह सोच सकता है–काश! मेरे जीवन में भी कोई ऐसी

बहिन होती, जिससे मैं रूठ सकता, जिसे मना सकता, जिससे बेवजह झगड़ सकता और जिसके सामने अपने मन की बात कह सकता ।

दूसरों के घर में राखी का उत्सव देखकर उसके मन में ईर्षा नहीं बल्कि एक ऐसी कमी का एहसास होता है जिसे वह चाहकर भी पूरा नहीं कर सकता।

दूसरे भाई–बहिनों का प्रेम देखकर कैसी मनोदशा होती है?

रक्षाबंधन पर जब किसी भाई की बहिन उसके माथे पर तिलक लगाती है, मिठाई खिलाती है और राखी बाँधकर भाई की लंबी उम्र की कामना करती है तो यह दृश्य अत्यन्त सुन्दर लगता है। लेकिन जिस व्यक्ति की बहिन नहीं है, उसके लिए यह दृश्य कभी–कभी आँखों में नमी भी ले आता है। वह दूसरों को देखकर खुश भी होता है और भीतर ही थोड़ा उदास भी ।

कभी वह सोचता है– मेरे पास भी तो कोई होती, जो मुझे डाँटती, मेरे लिए लड़ती मेरी पसंद–नापसंद जानती और रक्षाबंधन पर मेरी कलाई सजाती। लेकिन जीवन हमेशा हमारी इच्छाओं के अनुसार नहीं चलता। कुछ रिश्ते हमें मिलते हैं और कुछ रिश्तों का अभाव जीवनभर हमारे साथ रहता है। ऐसे में उस खालीपन को शिकायत बनाने के बजाय स्मृति और संवेदना में बदल देना ही बेहतर है।

जिसके पास बहिन है, तो इस रिश्ते की कीमत समझे :

जिन भाइयों के पास बहिनें हैं, उन्हें यह समझना चाहिए कि राखी केवल धागा नहीं है। यह बचपन की यादों, विश्वास, स्नेह और अपनत्व का प्रतीक है।

भाई–बहिन के बीच कभी मतभेद हो सकते हैं। विचार अलग हो सकते हैं। संपत्ति, परिवार, विवाह, जिम्मेदारियों या किसी पुराने प्रसंग को लेकर मन–मुटाव भी हो सकता है। लेकिन क्या जीवन इतना लंबा है कि हम अपने ही भाई या बहिन से वर्षों तक बात न करें ?

आज जो भाई आपके साथ हँसकर बैठा है, कल शायद न हो। आज जो बहिन आपको फोन कर सकती है, कल शायद परिस्थितियाँ उसे आपसे दूर कर दें। समय निकल जाने पर केवल पछतावा रह जाता है कि काश, उस समय हम थोड़ा झुक गए होते, थोड़ा क्षमा कर दिया होता और एक बार गले लगा लिया होता ।

भाई–बहिन के मन–मुटाव को समाप्त कर लेना चाहिए :

रक्षाबंधन वास्तव में केवल राखी बाँधने का पर्व नहीं बल्कि रिश्तों की गाँठ खोलने का अवसर भी है। यदि किसी भाई का बहिन से मन–मुटाव है, तो इस रक्षाबंधन पर पहल करने में संकोच नहीं करना चाहिए, और यदि बहिन भाई से नाराज है, तो उसे भी एक कदम आगे बढ़ना चाहिए।

किसी को यह नहीं सोचना चाहिये कि– " पहले वही फोन करे। गलती उसकी थी। मैं क्यों झुकू रिश्तों में जीत हमेशा सही साबित होने से नहीं होती, कभी–कभी जीत इस बात में होती है कि हमने अपना अहंकार छोड़कर अपना रिश्ता बचा लिया।

एक फोन, एक संदेश, एक मुलाकात या केवल इतना कहना – जो हुआ, उसे भूल जाओ, हम फिर से पहले जैसे हो जाएँ। कई वर्षों की दूरी समाप्त कर सकता है।

बहिन नहीं है तो किसी बहिन के प्रेम का सम्मान करें :

जिस भाई की अपनी बहिन नहीं है, उसके लिए रक्षाबंधन यह संदेश भी लेकर आता है कि बहिन का रिश्ता केवल जन्म से नहीं, भावनाओं से भी जुड़ा हो सकता है। समाज में अनेक रिश्ते ऐसे होते हैं, जहाँ सगी बहिन न होते हुए भी कोई महिला बहिन जैसा स्नेह देती है और कोई पुरुष भाई जैसा सम्मान देता है। इसलिए जिनकी बहिन नहीं है, वे भी इस दिन को केवल अपने अभाव के रूप में न देखें। किसी जरूरतमंद बहिन की सहायता करें, किसी अकेली बहिन को सम्मान दें, किसी रिश्ते में प्रेम का हाथ बढ़ाएँ शायद किसी की कलाई पर राखी न बँधे, लेकिन उसके जीवन में भाई का स्नेह जरूर पहुँच जाए।

रक्षाबंधन हमें एक बहुत बड़ी सीख देता है :

जीवन में धन, संपत्ति और सुख सुविधाएँ बहुत कुछ दे सकती हैं, लेकिन सच्चे रिश्तों का विकल्प नहीं बन सकतीं। कलाई पर बँधा राखी का धागा कुछ दिनों में पुराना हो जाता है, लेकिन उसके पीछे छिपा प्रेम जीवन भर याद रहता है। इसलिए इस रक्षाबंधन पर केवल राखी न बाँधे–रिश्तों को भी बाँधें ।

केवल मिठाई न खिलाएँ मन की मिठास भी लौटाएँ :

केवल उपहार न दें अपना समय और अपनापन भी दें और जिन भाई – बहिनों के बीच किसी कारण से वर्षों से दूरी है, वे इस बार अपने अहंकार से बड़ा अपने रिश्ते को समझें। क्योंकि कभी – कभी जीवन में सबसे बड़ा उपहार कोई वस्तु नहीं, बल्कि अपनों का फिर से अपना हो जाना होता है।

जिस भाई की बहिन नहीं है, उसकी कलाई भले ही राखी से सूनी रह जाए, लेकिन वह दूसरों के भाई–बहिन के प्रेम को देखकर यही कामना करे हर भाई अपनी बहिन का सम्मान करे, हर बहिन अपने भाई को समझे और जिनके बीच मनमुटाव है, वे आज ही अपने दिल के दरवाजे खोल दें। क्योंकि पता नहीं अगला रक्षाबंधन किसके साथ हो और किसके बिना ।

रिश्ते जब पास हों, तब उनकी कद्र कीजिए ? क्योंकि देर हो जाने के बाद यादें तो रह जाती हैं, लेकिन हाथ पकड़ने वाला अपना इंसान हमेशा नहीं रहता।

आइए, इस रक्षाबंधन एक राखी कलाई पर और एक संकल्प हृदय में बाँधे नाराजगी कितनी भी बड़ी हो, अपने भाई – बहिन से रिश्ता उससे बड़ा रखेंगे।



शक्ति हाथ में हो, फिर भी मुरली बजे तो वह कृष्ण है

(कृष्ण केवल भगवान नहीं, जीवन जीने की कला है)

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

श्रीकृष्ण का व्यक्तित्व जितना विराट है, उतना ही रहस्यमय भी । उन्हें कोई बालकृष्ण के रूप में देखता है, कोई गोपाल के रूप में, कोई प्रेम के प्रतीक के रुप में, कोई योगेश्वर के रूप में और कोई महाभारत के महान नीतिज्ञ के रूप में । लेकिन इन सभी रूपों के पीछे एक बात समान है । असीम शक्ति होते हुए भी अहंकार का अभाव ।

कृष्ण के पास सुदर्शन चक्र था, लेकिन हाथ में मुरली भी थी । वे युद्ध को समाप्त करने की क्षमता रखते थे, लेकिन जहाँ संभव हुआ वहाँ शांति का मार्ग चुना । वे राजाओं के राजा बनने की क्षमता रखते थे, लेकिन स्वयं को सारथी बनाने में भी उन्हें कोई संकोच नहीं था। यही कृष्ण की सबसे बड़ी विशेषता है।

पहली गाली पर सिर काट देने की शक्ति होने के बाद भी सौ गालियाँ सुनने की सामर्थ्य हो– तो वह "कृष्ण" है ।

शिशुपाल के बार– बार अपमान करने के बाद भी यदि कृष्ण चाहते तो पहली ही बार उसे दण्ड दे सकते थे । उनके पास शक्ति थी, अधिकार था और अवसर भी था, लेकिन उन्होंने अपनी शक्ति को क्रोध का साधन नहीं, न्याय का साधन बनाया । उन्होंने सीमा निर्धारित की और सौ अपराधों तक क्षमा की ।

यह हमें बहुत बड़ा संदेश देता है–क्षमा वही कर सकता है, जिसके पास दण्ड देने की शक्ति हो ।

जिसके पास प्रतिकार करने की क्षमता ही नहीं, उसकी मजबूरी को क्षमा समझ लेना भूल है । वास्तविक क्षमा वह है, जहाँ शक्ति होते हुए भी व्यक्ति अपने क्रोध पर नियंत्रण रखे ।

सुदर्शन चक्र हाथ में होने के बाद भी यदि हाथ में हमेशा "मुरली" हो– तो वह "कृष्ण" है।

"सुदर्शन चक्र" कृष्ण की शक्ति का प्रतीक है और "मुरली "उनके प्रेम का ।

एक हाथ में संसार को बदल देने की शक्ति और दूसरे हाथ में हृदय को जीत लेने वाला संगीत –यही "कृष्ण" है ।

आज मनुष्य के पास थोड़ी सी शक्ति आती है तो वह उसका प्रदर्शन करने लगता है।धन आया तो अहंकार, पद मिला तो व्यवहार बदल गया, अधिकार मिला तो दूसरों को छोटा समझने लगा ।

कृष्ण सिखाते हैं– शक्ति का अर्थ दूसरों को डराना नहीं, बल्कि दूसरों को सुरक्षित रखना हैं ।

इसलिए कृष्ण के हाथ में सुदर्शन होने के बावजूद उनकी पहचान "मुरली" से अधिक हुई । क्योंकि संसार ने उनकी शक्ति से अधिक उनके प्रेम और मधुरता को याद रखा ।

द्वारिका का वैभव मिलने के बाद भी यदि "सुदामा मित्र ही रहे– तो वह श्री कृष्ण है ।

कृष्ण और सुदामा की मित्रता संसार की सबसे सुंदर मित्रताओं में से एक है । एक ओर द्वारिका का वैभव, राजसी प्रतिष्ठा और अपार संपन्नता, दूसरी ओर निर्धन सुदामा । लेकिन कृष्ण के लिए मित्र की आर्थिक स्थिति का कोई महत्व नहीं था । सुदामा के पास देने के लिए कुछ विशेष नहीं था, फिर भी कृष्ण ने उनके प्रेम को स्वीकार किया ।

यही सच्ची मित्रता है :–

जहाँ जेब नहीं, दिल देखा जाए,
जहाँ पद नहीं, व्यक्ति देखा जाए,
जहाँ वर्तमान नहीं, पुराना संबंध देखा जाए
वहाँ कृष्ण जैसी मित्रता जन्म लेती है ।

आज अक्सर मित्रता भी स्वार्थ और हैसियत देखकर होने लगी हैं। व्यक्ति बड़ा हो गया तो पुराने मित्र छोटे लगने लगे । पद बदल गया तो व्यवहार बदल गया । पैसा बढ़ गया तो रिश्तों की कीमत घट गई ।

कृष्ण का जीवन हमें याद दिलाता हैं – "समय बदल सकता है, परिस्थितियाँ बदल सकती है, पद बदल सकते हैं, लेकिन सच्चे संबंधों का मूल्य नहीं बदलना चाहिए ।"

मुकुट पर मोरपंख हो, लेकिन सिर पर अहंकार न हो तो वह "कृष्ण " है । कृष्ण के सिर पर मुकुट है, लेकिन उस मुकुट से अहंकार नहीं झलकता ।

यह बहुत बड़ी बात है । सच्चा बड़ा व्यक्ति वह नहीं जिसके सिर पर मुकुट हो, बल्कि वह है जिसके सिर में अहंकार न हो ।

आज हम छोटी –सी उपलब्धि को भी अपने अहंकार का कारण बना लेते हैं । कृष्ण का वैभव असीम था, फिर भी उनका व्यवहार सहज था ।

मोरपंख हमें जैसे यह संदेश देता है– ऊँचाई कितनी भी मिल जाए, मनुष्य को अपनी जड़ों को नहीं भूलना चाहिए ।

राजा बनने की क्षमता होते हुए भी यदि "सारथी'' बनने में संकोच न हो– तो वह ''कृष्ण'' है ।

महाभारत का वह दृश्य कितना अद्भुत है– जिस कृष्ण के चरणों में बड़े–बड़े राजा नतमस्तक होते हैं, वही कृष्ण अर्जुन के रथ के सारथी बनते हैं ।

सारथी का काम क्या है ? दूसरे के रथ को दिशा देना । कृष्ण ने केवल अर्जुन का रथ नहीं चलाया, बल्कि अर्जुन के जीवन को भी दिशा दी ।

जब अर्जुन युद्धभूमि में मोह और भ्रम से घिर गया, तब कृष्ण ने उसे गीता का ज्ञान दिया । उन्होंने बताया कि जीवन में केवल भावनाओं के आधार पर निर्णय नहीं लिए जा सकते, कर्त्तव्य,सत्य और धर्म का भी विचार करना पड़ता है इसलिए कृष्ण केवल युद्ध के सारथी नहीं थे –वे मानव जीवन के सारथी थे और आज भी हैं ।

प्रेम हो , लेकिन मोह न हो – तो वह श्री कृष्ण हैं

कृष्ण का जीवन प्रेम से भरा हुआ है, लेकिन उनका प्रेम उन्हें कर्त्तव्य से विमुख नहीं करता यही प्रेम और मोह का अंतर है ।

मोह कहता है– " मेरा अपना है, इसलिए सही है । "

कृष्ण की नीति कहती है– "जो धर्म के साथ है, वही सही है ।"

कृष्ण ने कभी संबंधों को धर्म से ऊपर नहीं रखा । उन्होंने यह नहीं देखा कि सामने कौन है, उन्होंने यह देखा कि सत्य किसके साथ है ।

आज परिवारों में अनके विवाद केवल इसलिए होते हैं क्योंकि हम सत्य से पहले अपने व्यक्ति को देखते हैं। " वह मेरा बेटा है।, " वह मेरा भाई है।, " वह मेरा रिश्तेदार हैं", "वह मेरा अपना है ।" लेकिन कृष्ण हमें सिखाते हैं कि अपनापन महत्वपूर्ण है, पर सत्य और धर्म उससे भी ऊपर है ।

शांति का प्रस्ताव लेकर जाएँ, लेकिन अधर्म के सामने झुके नहीं – तो वह "कृष्ण" है ।

कृष्ण ने युद्ध को पहली पसंद नहीं बनाया । उन्होंने शांति का प्रयास किया लेकिन जब अधर्म ने न्याय देने से इनकार कर दिया, तब धर्म की रक्षा के लिए युद्ध अपरिहार्य हुआ । इससे एक बहुत बड़ा जीवन – संदेश मिलता है शांति का अर्थ कमजोरी नहीं है तथा युद्ध का अर्थ हमेशा हिंसा नहीं है कभी– कभी अन्याय के सामने खड़ा होना भी धर्म है । अन्याय को सहते रहना शांति नहीं, बल्कि अन्याय को बढ़ावा देना है । इसलिए कृष्ण का संदेश है– पहले समझाओ, फिर अवसर दो, फिर चेतावनी दो, लेकिन जब अधर्म अपनी सीमा पार कर जाए, तो धर्म की रक्षा के लिए दृढ़ निर्णय लेना भी आवश्यक है ।

कृष्ण हमें क्या सिखाते हैं ?

कृष्ण का जीवन यदि ध्यान से देखा जाए तो उसमें जीवन के लगभग हर प्रश्न का उत्तर दिखाई देता है– शक्ति मिले तो संयम रखो । धन मिले तो विनम्र रहो । पद मिले तो सेवा करो । मित्र मिले तो सुदामा को मत भूलो। ज्ञान मिले तो अहंकार मत करो । प्रेम मिले तो उसे पवित्र रखो। अपमान मिले तो हर बार क्रोध मत करो । अन्याय दिखे तो आँखें मत मूँदो । जब धर्म संकट में हो, तो सत्य के पक्ष में खड़े होने से मत डरो यही कृष्ण है ।

वे हमें यह नहीं सिखाते कि जीवन में संघर्ष नहीं होगा । वे सिखाते हैं कि संघर्ष के बीच अपना विवेक कैसे बचाए रखना है। वे यह नहीं कहते कि तुम्हारे पास शक्ति न हो, बल्कि वे कहते हैं कि शक्ति हो, पर शक्ति का स्वामी विवेक हो । वे यह नहीं कहते कि धन मत कमाओ, वे बताते हैं कि धन तुम्हारे पास रहे, लेकिन तुम्हारे मन पर अधिकार न कर ले । वह यह नहीं कहते कि संबंध छोड़ दो, वे सिखाते हैं कि संबंध निभाओ, लेकिन सत्य और धर्म को गिरवी रखकर नहीं ।

इसीलिए कृष्ण अद्‌भुत है :–

हाथ में सुदर्शन था, फिर भी मुरली बजाई ।
सामर्थ्य अपार था, फिर भी विनम्रता अपनाई ।
राजसी वैभव था, फिर भी सुदामा को गले लगाया ।
महान ज्ञान था, फिर भी स्वयं सारथी बन गए ।
प्रेम अथाह था, फिर भी धर्म से समझौता नहीं किया ।
शांति चाहते थे, फिर भी अधर्म के सामने झुके नही ।

और शायद कृष्ण के व्यक्तित्व का सबसे बड़ा संदेश यही है –

शक्ति रखना पूरी बात नहीं, शक्ति का अहंकार करना बुरा है । धन रखना बुरा नहीं धन का अहंकार करना बुरा है । ऊँचा उठना बुरा नहीं, दूसरों को छोटा समझना बुरा है, और प्रेम करना बुरा नहीं, प्रेम से सत्य और धर्म को खो देना बुरा है। इसलिए जिसके हाथ में सुदर्शन हो और फिर भी मुरली बजे, जिसके पास सामर्थ्य हो और फिर भी सभा हो, जिसके पास वैभव हो और फिर भी सुदामा अपना हो, जिसके पास ज्ञान हो और फिर भी विनम्रता हो, जिसके पास अधिकार हो और फिर भी सेवा का भाव हो ।

वहीं कृष्ण है ।

कृष्ण केवल पूजा करने के लिए नहीं. कृष्ण को समझने और अपने जीवन में उतारने के लिए है । और जब मनुष्य कृष्ण को अपने आचरण में उतार लेता है, तब उसके हाथ में शक्ति होते हुए भी हृदय में मुरली बजती रहती है । यही कृष्णत्व है।

पर्युषण पर्व और क्षमावाणी : विचार से आत्मविजय तक

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन
(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

"मिच्छामि दुक्कड़म" केवल क्षमा मांगने के शब्द नहीं है, बल्कि यह आत्मचिंतन अहंकार–त्याग, कृतज्ञता और मन की शुद्धि का महान संदेश है । जैन समाज का पर्युषण पर्व हमें अपने भीतर झाँकने, अपनी भूलों को स्वीकार करने, दूसरों की भूलों को क्षमा करने और जीवन को अधिक पवित्र एवं संयमित बनाने की प्रेरणा देता है ।

यह पर्व हमें यह भी सिखाता है कि मनुष्य के जीवन में कोई भी परिवर्तन अचानक नहीं आता । हर कार्य पहले विचार के रूप में जन्म लेता है, और अनेक चरणों से गुजरकर परिणाम तक पहुँचता है ।

हर सफलता की शुरूआत सोच से होती है:

संसार में कोई भी बड़ा कार्य अचानक पूरा नहीं हो जाता । सबसे पहले उसके बारे में विचार मन में आता है । विचार से इच्छा उत्पन्न होती है, इच्छा से संकल्प बनता है, संकल्प के बाद योजना बनती है और फिर उसे पूरा करने के लिए कर्म, परिश्रम,धैर्य तथा निरंतरता की आवश्यकता होती है । इसे एक छोटे से उदाहरण से समझ सकते हैं ।

मान लीजिए किसी व्यक्ति के मन में विचार आया कि "मुझे एक पेड़ लगाना चाहिए।" पहले सोच आई । फिर उस सोच ने इच्छा का रूप लिया । इच्छा ने संकल्प का रूप लिया कि अमुक दिन पौधा लगाया जाएगा । इसके बाद उसने योजना बनाई स्थान चुना, पौधा लाया और मिट्टी की व्यवस्था की फिर उसने पौधा लगाया, अर्थात् कार्य का प्रारंभ किया । लेकिन केवल पौधा लगा देना ही सफलता नहीं है । उसे नियमित पानी देना, खाद देना और उसकी रक्षा करना भी आवश्यक है । इसके बाद आता है धैर्य– क्योंकि पौधा

एक–दो दिन में वृक्ष नहीं बनता । महीनों और वर्षो तक उसकी देखभाल करनी पड़ती है ।

अंततःवही छोटा – सा पौधा एक दिन विशाल वृक्ष बन जाता है और दूसरों को छाया,फल और प्राणवायु प्रदान करता है ।

अर्थात–सोच–इच्छा–संकल्प–योजना–कर्म–निरंतरता–धैर्य–परिणाम – सफलता यही जीवन का नियम है ।

विचार ही कर्म का बीज है :

मनुष्य के जीवन में भी यही प्रक्रिया काम करती है । हमारे कर्मो का बीज सबसे पहले हमारे विचारों में पड़ता है । यदि विचार अच्छे हैं तो अच्छे कर्मों की संभावना बढ़ती है और यदि विचारों में क्रोध, ईर्ष्या, अहंकार तथा द्वेष भरा है तो वही धीरे–धीरे हमारे व्यवहार और कर्मों में दिखाई देने लगता है ।

इसलिए पर्युषण पर्व हमें सबसे पहले अपने विचारों की सफाई करने की प्रेरणा देता है। मन में शुद्ध विचार होंगे तो वाणी में मधुरता आएगी,वाणी मधुर होगी तो व्यवहार अच्छा होगा, व्यवहार अच्छा होगा तो संबंध अच्छे होंगे और संबंध अच्छे होंगे तो जीवन में शांति आएगी ।

इसलिए आत्मशुद्धि का पहला चरण है– अपने मन को देखना और अपने विचारों को पहचाना ।

क्षमा भी एक यात्रा है :

जिस प्रकार पौधे को वृक्ष बनने में अनेक चरणों से गुजरना पड़ता है, उसी प्रकार सच्चे क्षमाभाव तक पहुँचने के लिए भी मनुष्य को कई आंतरिक चरणों से गुजरना पड़ता है । पहले हमें अपनी गलती का बोध होना चाहिए । फिर आत्मचिंतन होना चाहिए। फिर अपनी भूल स्वीकार करने का साहस चाहिए । जिसने हमारे साथ गलती की है, उसके प्रति मन से द्वेष छोडकर क्षमा करने का विशाल हृदय चाहिए । तभी क्षमा केवल शब्द नहीं रहती, बल्कि हमारे चरित्र का हिस्सा बनती है ।

दूसरों के उपकार को कभी नहीं भूलना चाहिए :

मनुष्य अकेला अपने जीवन की यात्रा पूरी नहीं करता । किसी न किसी मोड़ पर अनेक लोग उसका सहयोग करते हैं ।

किसी ने कठिन समय में आर्थिक सहायता की, किसी ने बीमारी में साथ दिया, किसी ने सही सलाह दी, किसी ने संकट में हाथ थामा, किसी ने निराशा के समय हिम्मत दी, और कभी किसी के केवल दो प्रेमपूर्ण शब्दों ने टूटे हुए मन को संभाल लिया । ऐसे उपकारों को कभी नहीं भूलना चाहिए ।

परिस्थितियाँ बदल सकती है, समय बदल सकता है,व्यक्ति की आर्थिक स्थिति बदल सकती है, लेकिन उपकार का मूल्य कभी कम नहीं होना चाहिए । जिसने हमारे बुरे समय में हमारा साथ दिया, उसके बुरे समय में हमें उसके साथ खडा होना चाहिए ।

दूसरों ने हमारे लिए क्या किया इसे याद रखना चाहिए । हमने दूसरों के लिए क्या किया – इसे भूल जाना चाहिए ।यही कृतज्ञता है और यही संस्कार है ।

अपने द्वारा किये गए उपकार को याद रखना अहंकार बन सकता है :

आज मनुष्य की एक बड़ी कमजोरी यह है कि वह दूसरों की छोटी –सी भूल को वर्षों तक याद रखता है, लेकिन अपने द्वारा किए गए उपकारों को जीवनभर याद रखता हैं ।

वह बार–बार कहता है – " मैंने तुम्हारे लिए यह किया था ।" "जब तुम्हें जरूरत थी, तब मैंने तुम्हारी मदद की थी । " मैंने तुम्हारे बुरे समय में तुम्हारा साथ दिया था । "

यदि किसी उपकार को बार–बार गिनाया जाए तो वह उपकार नहीं रहता, बल्कि एहसान जताने का माध्यम बन जाता है। सच्चा उपकार वही है जिसे "करके मनुष्य भूल जाए'' । नेकी करो और भूल जाओ, नेकी पाओ और याद रखों ।

दूसरों के उपकार को स्मरण करना कृतज्ञता है, जबकि अपने उपकार को बार–बार स्मरण करना कई बार अहंकार का कारण बन जाता है ।

क्षमा मांगना कमजोरी नहीं, आत्मबल है :

कई बार मनुष्य सोचता है कि " मैं क्यों क्षमा माँगूँ ? गलती तो उसकी थी । लेकिन क्षमा पर्व हमें दूसरे की गलती खोजने से पहले अपनी आत्मा को देखने की प्रेरणा देता है । हमसे भी जाने–अनजाने मन, वचन और कर्म से किसी को दुःख पहुँचा, हो सकता है किसी शब्द ने किसी का दिल दुखाया हो, किसी व्यवहार से किसी को ठेस पहुँची हो, किसी उपेक्षा से कोई दुःखी हुआ हो, या किसी बात को गलत समझकर हमने किसी के प्रति कठोरता दिखाई हो । मनुष्य पूर्ण नहीं है । इसलिए अपनी भूल स्वीकार करना कमजोरी नहीं, बल्कि चरित्र की मजबूती है । किसी की भूल को हृदय से क्षमा कर देना उससे भी बड़ी महानता है ।

क्षमावाणी केवल एक दिन का पर्व न बने :

यदि पर्युषण के दिनों में हम सबको "मिच्छामि दुक्कडम" कह दें, लेकिन उसके बाद फिर वही क्रोध, अहंकार, ईर्ष्या और कटुता हमारे जीवन में लौट आए, तो क्षमा पर्व की वास्तविक भावना अधूरी रह जाएगी । क्षमा का अर्थ केवल एक दिन क्षमा मांगना नहीं है । क्षमा का अर्थ हैं– मन में वैर न रखना, बदला लेने की भावना न रखना, दूसरों की भूलों को बार–बार न दोहराना, अपनी भूल स्वीकार करना, और संबंधों को अहंकार से अधिक महत्व देना । जिस प्रकार पौधे की प्रतिदिन देखभाल करने से वह वृक्ष बनता है, उसी प्रकार प्रतिदिन छोटे–छोटे सद्विचार और सद्कर्म हमारे व्यक्तित्व को महान बनाते है ।

इस क्षमावाणी पर लें जीवन बदलने का संकल्प :

आइए, इस पावन पर्युषण पर्व पर हम केवल औपचारिक रूप से क्षमा न मांगे, बल्कि अपने जीवन में कुछ संकल्प भी लें – दूसरों की गलती को क्षमा करेंगे,अपनी गलती होने पर क्षमा माँगेगे, दूसरों के उपकार को कभी नहीं भूलेंगे, अपने द्वारा किए गए उपकार का हिसाब नहीं रखेंगे, मन में द्वेष नहीं पालेंगे, वाणी से किसी को अनावश्यक दुःख नहीं देंगे । और सबसे बढ़कर अपने विचारों को शुद्ध रखने का निरन्तर प्रयास करेंगे ।

क्योंकि –विचार से इच्छा, इच्छा से संकल्प, संकल्प से योजना, योजना से कर्म, कर्म से निरंतरता, निरंतरता से परिणाम, और परिणाम से सफलता प्राप्त होती है। इसी प्रकार आत्मचिंतन से बोध, बोध से विनम्रता, विनम्रता से क्षमा–वाचना, क्षमा–याचना से मन की शुद्धि और मन की शुद्धि से आत्मिक शांति प्राप्त होती है ।

यही पर्युषण की सच्ची साधना है ।

अंत में आइए इस क्षमावाणी पर हम अपने मन का बोझ हल्का करें । पुराने गिले–शिकवे छोड़ें, संबंधों में प्रेम लौटाएँ, उपकारों को याद रखें और अपने उपकारों को भूल जाएँ । किसी के प्रति मन में वर्षो से कोई शिकायत है तो आज उसे समाप्त करने का प्रयास करें। क्योंकि क्षमा सामने वाले को ही नहीं, सबसे पहले हमारे अपने मन को मुक्त करती है ।

मिच्छामि दुक्कडम ।

यदि मैंने मन, वचन अथवा कर्म से जाने–अनजाने किसी को भी दुःख पहुँचाया हो तो मैं हृदय से क्षमा चाहता हूँ । और जिसने भी कभी मेरे प्रति कोई भूल की हो, उसे मैं भी हृदय से क्षमा करता हूँ । क्षमा ही शांति है । क्षमा ही शक्ति है । क्षमा ही विनम्रता है । क्षमा ही आत्मविजय का मार्ग है । पर्युषण पर्व एवं क्षमावाणी पर्व की समस्त जैन समाज को हार्दिक – शुभकामनाएँ ।

जय जिनेन्द्र !

क्या यह युग फिर एक श्री राम या श्री कृष्ण की प्रतीक्षा में है

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

आज यदि हम अपने चारों ओर दृष्टि डालें तो ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन का शायद ही कोई क्षेत्र भ्रष्टाचार से अछूता बचा हो। बिजली, पानी, शिक्षा, चिकित्सा, न्याय, प्रशासन राजनीति, व्यापार, धर्म और सामाजिक व्यवस्था – लगभग हर क्षेत्र में कहीं न कहीं स्वार्थ, बेईमानी और नैतिक पतन दिखाई देता है। सबसे अधिक पीड़ा तब होती है, जब जिन लोगों को समाज आदर्श मानता है, वहीं बाद में भ्रष्टाचार के आरोपों में घिर जाते हैं। ऐसे में सहज ही मन में प्रश्न उठता है क्या अब रावण और कंस की तरह इस भ्रष्टाचार का अंत करने के लिए भगवान को फिर पृथ्वी पर अवतार लेना पडेगा?

भारतीय संस्कृति हमें यह विश्वास देती है कि जब अधर्म बढ़ता है, तब ईश्वर धर्म की रक्षा के लिए अवतरित होते हैं। लेकिन यह भी सत्य है कि भगवान का अवतार केवल चमत्कार दिखाने के लिए नहीं होता, बल्कि मानव समाज को उसके कर्मों का दर्पण दिखाने के लिए होता है। रावण और कंस केवल व्यक्ति नहीं थे, वे अहंकार, अन्याय और अधर्म के प्रतीक थे। आज यदि हम ईमानदारी से आत्मचिंतन करें, तो पाएँगे कि आधुनिक रावण केवल किसी एक व्यक्ति में नहीं, बल्कि लालच, रिश्वत, छल, झूठ, स्वार्थ और सत्ता के दुरुपयोग के रूप में समाज के अनेक हिस्सों में फैल चुका है।

आज ईमानदार व्यक्ति स्वयं को असहाय अनुभव करता है। जो रिश्वत नहीं देता, उसक काम अटक जाता है। जो सत्य बोलता है, वही विरोध फैलता है। जो नियमों का पालन करता है, वही उपहास का पात्र बनता है। दूसरी ओर बेईमानी करने वाला कई बार सम्मान, धन और प्रभान का अधिकारी बन जाता है। ऐसी परिस्थितियों में अनेक लोगों का विश्वास डगमगाने लगता है और वे सोचने लगते हैं कि अब केवल भगवान ही इस व्यवस्था को बदल सकते हैं।

भगवान का अवतार तभी सार्थक होगा, जब समाज भी धर्म का साथ देने का साहस जुटाए। यदि हम सब केवल यह प्रतीक्षा करते रहें कि कोई दिव्य शक्ति आए और सब ठीक कर दे, तो यह हमारी जिम्मेदारी से बचने जैसा होगा। भगवान मार्ग दिखा सकते हैं, प्रेरणा दे सकते हैं, लेकिन उस मार्ग पर चलना मनुष्य का ही कर्तव्य है।

फिर भी यदि अधर्म अपनी सभी सीमाएँ पार कर दे, यदि न्याय पूरी तरह समाप्त हो जाए और मानवता कराह उठे, तो भारतीय आस्था यही कहती है कि ईश्वर कभी मौन नहीं रहते। वे किसी न किसी रूप में, किसी न किसी माध्यम से धर्म की रक्षा अवश्य करते हैं। यह रूप किसी महापुरुष का हो सकता है, किसी संत का, किसी समाज–सुधारक का या फिर जागृत जनशक्ति का।

अंततः प्रश्न यह नहीं है कि ''भगवान कब आएँगे?'' बल्कि यह है कि ''क्या हम भगवान के आने योग्य समाज बना रहे हैं?'' यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर बैठे लोभ, छल और अन्याय के रावण का वध कर दे, तो शायद पृथ्वी पर किसी नए अवतार की आवश्यकता ही न पड़े। लेकिन यदि मनुष्य अपने कर्त्तव्यों को भूलकर केवल स्वार्थ का दास बन जाए, तो इतिहास साक्षी है– अधर्म अधिक समय तक कभी नहीं टिकता। सत्य देर से ही सही, अंततः विजयी होता है। अतः ''जन समाज में भ्रष्टाचार चरम पर पहुँच जाता है, तब लोग भगवान के अवतार की प्रतीक्षा करने लगते हैं। परंतु शायद भगवान भी यही चाहते हैं कि पहले मनुष्य अपने भीतर के रावण को मारे। यदि फिर भी अधर्म सारी सीमाएँ लाँघ जाए, तो ईश्वर का न्याय अवश्य प्रकट होता है– क्योंकि इतिहास बदल सकता है, युग बदल सकते हैं, लेकिन धर्म और सत्य का शाश्वत नियम कभी नहीं बदलता।''

मैं 'सब कुछ' और तुम 'कुछ भी नहीं'..बस यही 'सोच' 'इंसान को इंसान' नहीं 'बनने' देती..!

एक बीज से वृक्ष तक–जीवन भर परोपकार

जस्टिस नगेन्द्र कुमार जैन
Former Chief Justice – Madras and Karnataka High Court

कभी आपने एक छोटे से बीज को ध्यान से देखा है?

वह देखने में कितना छोटा होता है – न कोई विशेष आकार न कोई आकर्षक रूप। लेकिन उसी छोटे से बीज के भीतर एक विशाल वृक्ष बनने की पूरी संभावना छिपी होती है। जब वह बीज मिट्टी में जाता है, तो सबसे पहले उसे अपने अस्तित्व का अहंकार छोडना पड़ता है। वह मिट्टी में दबता है, गलता है, अपना पुराना रूप खोता है और तभी एक नई जिंदगी का जन्म होता है। धीरे–धीरे वह बीज अंकुर बनता है, पौधा बनता है, और फिर एक दिन विशाल वृक्ष बन कर खड़ा हो जाता है। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि वह वृक्ष खड़ा होकर अपने लिए नहीं जीता। वह स्वयं धूप में खड़ा रहता है, लेकिन दूसरों को छाया देता है। वह स्वंय वर्षा सहता है, आँधी सहता है, गर्मी और सर्दी सहता है, लेकिन उसके नीचे बैठने वाले को राहत देता है।

वह अपने फल स्वयं नहीं खाता, अपनी छाया स्वयं के लिए नही रखता, अपनी खुशबू स्वयं नहीं सूंघता, और अपनी शाखाओं पर आने वाले पक्षियों से कभी किराया नहीं मांगता। जो भी उसके पास आता है, वह उसे कुछ न कुछ देता ही है।

पक्षियों को आश्रय, राहगीरों को छाया, भूखे को फल, प्रकृति को हरियाली, वातावरण को प्राणवायु और मनुष्य को जीवन का संदेश। वृक्ष की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह देने के बाद भी कभी यह नहीं कहता– ''मैंने तुम्हारे लिए इतना किया।''

कोई उसके तने पर अपना नाम लिख देता है, कोई उसकी शाखा तोड़ देता है, कोई उसके फल पत्थर मारकर गिरा देता है, फिर भी वृक्ष अपनी प्रकृति नहीं बदलता। वह बदले में देना ही जानता हैं। यह वृक्ष हमें मनुष्य के

जीवन का कितना बड़ा पाठ पढ़ाता है। आज मनुष्य थोड़ा–सा देने के बाद चाहता हैं कि उसकी प्रशंसा हो, उसका नाम हो, उसे सम्मान मिले। लेकिन वृक्ष तो बिना किसी अपेक्षा के जीवन भर देता रहता है। उसकी सेवा केवल उसके जीवित रहने तक सीमित नहीं रहती। जब वह बूढ़ा हो जाता है, और हरी पत्तियाँ समाप्त हो जाती है, तब भी उसकी जीवन व्यर्थ नहीं जाता। उसकी लकडी किसी के घर में चूल्हा जलाती है, किसी को सर्दी से बचाती है, किसी के घर की जरूरत पूरी करती है और अनेक उपयोगी वस्तुओं का आधार बनती है। अर्थात् वृक्ष का पूरा जीवन ही परोपकार की कहानी हैं ।

बीज ने मिट्टी में दबकर त्याग किया, पौधे ने संघर्ष करके विकास किया, वृक्ष ने जीवन भर दूसरों को दिया, और सूखने के बाद भी अपना शरीर दूसरों के काम दे दिया। सच तो यह है कि– वृक्ष हमें केवल ऑक्सीजन नहीं देते, वे हमें जीने का दर्शन भी देते हैं। वह सिखाते हैं कि जीवन की वास्तविक सुंदरता लेने में नहीं, देने में हैं।

जिस प्रकार एक बीज अपने भीतर छिपे विशाल वृक्ष को पहचान कर धीरे–धीरे विकसित होता है, उसी प्रकार मनुष्य के भीतर भी सेवा, करूणा प्रेम, त्याग और परोपकार के बीज छिपे होते हैं। आवश्यकता केवल उन्हें विकसित करने की है। हमारे जीवन की सफलता केवल इस बात से नहीं मापी जानी चाहिए कि हमने कितना धन कमाया कितनी संपत्ति बनाई या कितनी सुविधाएँ जुटाई। एक दिन सब कुछ यहीं छूट जाना है।

वास्तविक प्रश्न तो यह है–

हमने अपने जीवन में कितने चेहरों पर मुस्कान ला पाये ?
कितने दुःखी लोगों को सहारा दिया ?
कितनों के जीवन में आशा जगाई ?
हमारे जाने के बाद लोग हमें किस रूप में याद करेंगें ?
इसलिए आइए, उस छोटे से बीज से सीखें।
छोटे बनकर शुरूआत करें,

संघर्षो से न घबराएँ,
बडे बने तो अहंकार न करें,
और सामर्थ्य मिले तो दूसरों के काम आएँ।

क्योंकि– बीज ने अपना अस्तित्व मिटाया, तब वृक्ष बना। वृक्ष ने अपना जीवन दिया, तब असंख्या जीवन का सहारा बना, और अंत में अपना शरीर भी दे दिया, तब भी उसकी उपयोगिता समाप्त नहीं हुई।

शायद इसी को कहते हैं–''जीवन ऐसा जियो कि तुम्हारा होना दूसरों के लिए वरदान बने, और तुम्हारे जाने के बाद भी तुम्हारी उपयोगिता बनी रहे।

पेड़ की तरह बनिए– जड़े अपनी संस्कृति में रखिए,

आकाश की ओर बढ़िए, धूप स्वयं सहिए,
दूसरों को छाया दीजिए, और जीवन के अंतिम
क्षण तक परोपकार करते रहिए।

यही प्रकृति का संदेश है,
यही जीवन का सार है,
और शायद यही मनुष्य होने की सबसे बड़ी सार्थकता भी है।



हर इन्सान में कोई न कोई प्रतिभा रहती है, लेकिन वो अक्सर इसे दूसरों जैसा बनने में नष्ट कर देता है।दूसरों की जिंदगी में अपनी जगह ढूंढना बंद कर दो, हमेशा खुश रहोगे

देश का युवा : समस्याएँ पलायन और समाधान

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

आज का युवा किसी भी राष्ट्र की सबसे बड़ी शक्ति, सबसे मूल्यवान पूंजी और भविष्य का आधार होता है। भारत जैसे युवा प्रधान देश में यह अपेक्षा स्वाभाविक है कि युवाओं के हाथों में राष्ट्र की प्रगति की बागड़ोर होगी, किंतु आज का यथार्थ इससे भिन्न और चिंताजनक है। आज का युवा संघर्षो से घिरा हुआ है और उसकी आशाएं धीरे–धीरे निराशा में बदलती जा रही है।

लंबे समय तक शिक्षा प्राप्त करने, कठिन प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने और परिवार की उम्मीदों का बोझ उठाने के बाद भी अब युवाओं को योग्यता के अनुरूप रोजगार नहीं मिलता, तो उसका मन टूटने लगता है। सीमित सरकारी नौकरियाँ, निजी क्षेत्र में अस्थिरता, कम, वेतन, कॉन्ट्रेक्ट आधारित नियुक्तियां और भविष्य की अनिश्चितता युवाओं को मानसिक तनाव में डाल देती है।

जो युवा नौकरी के स्थान पर स्वयं का व्यवसाय शुरू करना चाहता है उसके सामने भी राह आसान नहीं है। जटिल कानून, लाइसेंस की प्रक्रिया विभागीय औपचारिकताएँ, भारी टैक्स, बार–बार बदलती नीतियाँ और भ्रष्टचार उसकी ऊर्जा और उत्साह को धीरे–धीरे समाप्त कर देते है। कई बार तो ईमानदार युवा शुरूआत से पहले ही हार मान लेता है।

सामाजिक वातावरण भी युवाओं के मनोबल को ठेस पहुँचाता है। जातिवाद, क्षेत्रवाद और धार्मिक आंदोलनों ने समाज को बाँट दिया है। आज कई योग्यता से अधिक जाति, पहचान और संपर्क को महत्व दिया जाता है। इससे मेहनती और प्रतिभाशाली युवा स्वयं को ठगा हुआ महसूस करता है उसे लगता है कि उसका भविष्य उसकी क्षमता से नहीं, बल्कि उसकी पहचान से तय होगा।

आधुनिक जीवनशैली और उपभोक्तावादी संस्कृति ने युवाओं पर एक नया दबाव बना दिया है। दिखावे की होड़, सोशल मीडिया की तुलना, महंगे गैजेट्स, फैशन और कृत्रिम प्रतिष्ठा के कारण अनाश्यक खर्च बढ़ता जा रहा है। आय सीमित है और अपेक्षाएँ असीमित, इस असंतुलन का सीधा प्रभाव युवाओं की मानसिक शांति पर पड़ता है।

इसके साथ ही असुरक्षा में बढ़ते अपराध, गैंगवार, धोखाधड़ी, बैरोजगारी से उपजी कुंठा और असुरक्षा का वातावरण युवाओं को भयभीत करता है। जब से सुरक्षित विकल्पों की ओर देखने लगता है।

इन परिस्थितियों का परिणाम यह होता है कि युवा बेहतर पैकेज सुव्यवस्थित प्रणाली, समय पर वेतन, मेहनत का सम्मान और आर्थिक स्थिरता की तलाश में विदेश का रूख करता है। वहाँ उसे कम से कम यह भरोसा मिलता है कि उसकी मेहनत का मूल्य मिलेगा और जीवन एक तय दिशा में आगे बढेगा। यह निर्णय देश से प्रेम की कमी नहीं, बल्कि परिस्थितियों की कठोर सच्चाई का परिणाम होता है।

दुखद तथ्य यह है कि जिस युवा को देश की शिक्षा व्यवस्था ने तैयार किया, वही युवा अपनी प्रतिभा, परिश्रम और नवाचार की शक्ति विदेशों की प्रगति में लगा रहा है। यह केवल ''ब्रेन ड्रेन" कहकर अनदेखा करना समस्या की गंभीरता को कम करके देखना होगा।

यदि समय रहते इस स्थिति पर ध्यान नहीं दिया गया, तो देश के भीतर केवल असंतोष और निराशा शेष रह जाएगी। युवा यदि देश में ही स्वयं को असुरक्षित, उपेक्षित और हताश महसूस करेगा, तो राष्ट्र की प्रगति की कल्पना अधुरी रह जाएगी।

समाधान :–

1. शिक्षा को रोजगारपरक और कौशल आधारित बनाया जाए।
2. स्टार्टअप और छोटे व्यवसायों के लिए नियम सरल, टैक्स व्यवहारिक और सिस्टम पारदर्शी हो।
3. भर्ती प्रक्रियाओं में योग्यता और पारदर्शिता सुनिश्चित की जाए।
4. जाति,धर्म और क्षेत्र से ऊपर उठकर प्रतिभा को अवसर मिले।
5. युवाओं में सादगी, अनुशासन और दीर्घकालीन सोच को प्रोत्साहित किया जाए।
6. सुरक्षित सामाजिक वातावरण और कानून का सख्त पालन सुनिश्चित हो।

युवा देश की समस्या नहीं, समाधान है। आवश्यकता है उसे सही अवसर, सम्मान और विश्वास देने की। यदि युवा देश में सुरक्षित और सशक्त महसूस करेगा, तो विदेश जाना उसकी मजबूरी नहीं, केवल विकल्प रह जाएगा।

आज आवश्यकता है आत्ममंथन की–नीतियों का, व्यवस्थाओं का और सामाजिक सोच का। क्योंकि जब युवा हताश होता है, तो केवल एक व्यक्ति नहीं टूटता, पूरा राष्ट्र कमजोर होता है।

युवा बचेगा, तो देश बचेगा।
युवा सशक्त होगा, तभी भारत सशक्त होगा।

स्वीकार करने की हिम्मत और सुधार करने की नीयत हो तो इंसान बहुत कुछ सीख सकता है। हमको कितने लोग पहचानते है ? उसका महत्व नहीं है, लेकिन क्यों पहचानते है..? इसका महत्व है. . .

विदेशी चमक में बुझते संस्कार

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

एक सामाजिक कार्यक्रम के दौरान मित्र के घर जाने का अवसर मिला। मित्र भोजन कर रहे थे। तभी उनके छोटे भाई की पत्नी और उसकी बहू (सास–बहू) कमरे में आई। भाई की पत्नी ने आते ही भारतीय परम्परा के अनुसार चरण स्पर्श कर आर्शीवाद लिया– एक क्षण को लगा जैस संस्कार आज भी जीवित है। पर अगले ही पल उसकी बहु ने चरण स्पर्श करना उचित नहीं समझा और केवल औपचारिक शब्द बोलकर आगे बढ गई। मित्र ने सफाई दी–''बहू विदेश में रहती है, इसलिए भारतीय संस्कार भूल गई है, इसे माफ कर दीजिए।

यहीं से असली प्रश्न जन्म लेता है– क्या विदेश जाना संस्कार छोडने का लाइसेंस बन गया है?क्या आधुनिकता का अर्थ से कट जाना है?आज यह कोई अकेली घटना नहीं, बल्कि एक खतरनाक सामाजिक प्रवृत्ति बन चुकी है। हमारे बच्चे विदेश जाकर डिग्रीयाँ और धन तो कमा लेते हैं, पर धीरे–धीरे वह विनम्रता, वह आदर, वह पारिवारिक मर्यादा खो बैठते हैं जो भारतीय सभ्यता की पहचान रही हैं चरण स्पर्श को ''पुरानी सोच", दकिया–नूसी परम्परा" या अनावश्यक भुकाव" कहकर खारिज कर देना दरअसल अहंकार का आधुनिक संस्कार है। इससे भी अधिक चिंताजनक बात यह है कि हम बड़े माता–पिता, रिश्तेदार, समाज– इस पतन को चुपचाप स्वीकार कर लेते हैं।

हम कहते हैं– ''अब जमाना बदल गया है।" नहीं! ज्माना नहीं बदला, हमारी रीढ़ झुक गई है।

संस्कार कोई कपड़े नहीं जो देश बदलते ही उतार दिये जाए। संस्कार वह बोझ नहीं जो उन्नति में बाधा बने। संस्कार वह आंतरिक अनुशासन है जो मनुष्य को मनुष्य बनाए रखते हैं। पश्चिमी सभ्यता से सीखना गलत नहीं, पर उसकी नकल में अपनी आत्मा गिरवी रख देना आत्मघात है। जहाँ ''मैं" सबसे ऊपर हो, वहाँ ''हम" मर जाता है। जब ''हम" मरता है, तो परिवार,

समाज और अंततः राष्ट्र कमजोर हो जाता है। सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि जिन संस्कारो को छोड़कर हम ''आधुनिक '' बने वही संस्कार विदेशों में आज ''इंडियन वैल्यूज'' कहकर प्रशंसा के विषय है– पर हम स्वयं उन्हें ढोने लायक भी नहीं समझते। अब समय आ गया है कि हम स्पष्ट कहें – संस्कार छोडना प्रगति नहीं, पतन है। झुकना कमजोरी नहीं, संस्कृति की शक्ति हैं

यदि हमारी आने वाली पीढियाँ केवल विदेशी नागरिक बनकर रह गई और भारतीय संस्कारों से शून्य हो गई, तो इतिहास हमें माफ नहीं करेगा। क्योंकि सभ्यताएँ हथियारों से नहीं, संस्कारों से जीवित रहती हैं।

❁❁❁

इंसान को हमेशा ये सोचना चाहिए..गलती आपकी हो या मेरी रिश्ता तो हमारा है ना..! मुस्कुराना सीखना पड़ता है.! रोना तो पैदा होते ही आ जाता हैं.!

⁂

सही कर्म' वह नहीं है ,जिसके परिणाम' हमेशा सही हो...!सही कर्म वह है ,जिसका 'उद्देश्य' कभी गलत ना हो.....!!!!!

⁂

चरित्र से पवित्र रहो , फिर किसी की ताकत नहीं आप पर उंगली उठा सके!!

⁂

विनम्रता समाज में मान और ऊँचाई देती है,अभिमान सिर्फ पतन, चयन आपको करना है ।

सकारात्मक सोच–जीवन की सबसे बड़ी शक्ति

जस्टिस नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

मनुष्य का व्यक्तित्व उसकी वाणी, व्यवहार और सबसे बढ़कर उसकी सोच से पहचाना जाता है। सकारात्मक सोच केवल अच्छे विचार रखना नहीं है, बल्कि हर परिस्थिति में अच्छाई खोजने की कला है। जो व्यक्ति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाता है, वह कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी अवसर तलाश लेता है, जबकि नकारात्मक सोच वाला व्यक्ति अवसरों में भी कठिनाइयाँ ढूंढता रहता है। इसलिए कहा गया है कि जैसी हमारी सोच होती है, वैसा ही हमारा जीवन बनता चला जाता है।

यदि किसी के हाथ में खाली बर्तन दिखाई दे, तो तुरंत यह मत मान लीजिए कि वह मांगने निकला है। यह भी हो सकता है कि वह अपना अन्न, धन या आवश्यक वस्तुएँ किसी जरूरतमंद को देकर लौट रहा हो। संसार में अनेक ऐसे लोग हैं जो बिना किसी प्रचार या प्रसिद्धि की इच्छा के निस्वार्थ भाव से सेवा करते हैं। इसलिए किसी भी व्यक्ति के बारे में केवल बाहरी परिस्थितियों को देखकर निर्णय लेना न्यायसंगत नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में संघर्ष, त्याग और सेवा की ऐसी अनेक कहानियाँ होती है, जिन्हें दुनिया देख नहीं पाती। विवेक वान वहीं है जो निर्णय लेने से पहले परिस्थिति को समझने का प्रयास करे।

इसी प्रकार, जीवन में पद, प्रतिष्ठा धन, सौंदर्य और अधिकार का अहंकार भी स्थायी नहीं होता। जिस छत को अपने सबसे ऊपर होने का बहुत गर्व था, समय ने करवट ली, उसके ऊपर एक और मंजिल बन गई और नई छत फर्श बन गई। यह उदाहरण हमें सिखाता है कि समय सबसे बड़ा परिवर्तनकर्ता है। आज जो ऊँचाई पर है, वह कल

सामान्य स्थिति में भी आ सकता है, और जो आज संघर्ष कर रहा है, वह कल सफलता के सर्वोच्च शिखर पर पहुंच सकता है। इसलिए सफलता मिलने पर विनम्र रहना और कठिन समय में धैर्य बनाए रखना ही सच्ची महानता है।

दूसरों के प्रति सम्मान, सहानुभूति और सद्भाव रखने वाला व्यक्ति कभी अकेला नहीं रहता। उसके अच्छे संस्कार और मधुर व्यवहार ही उसकी सबसे बडी पूंजी बन जाते हैं। किसी की आलोचना करने से पहले उसके संघर्षो को समझने का प्रयास करें, क्योंकि हर मुस्कुराते चेहरे के पीछे कोई न कोई अनदेखी कहानी अवश्य होती है। जो व्यक्ति दूसरों के दुःख को समझता है। वही वास्तव में मानवता का पालन करता है।

आइए, हम अपने जीवन में सकारात्मक सोच, विनम्रता, संवेदनशीलता और सेवा–भाव को अपनाने का संकल्प लें। याद रखिए– निर्णय लेने से पहले सत्य को जानना बुद्धिमानी है, सफलता मिलने पर विनम्र बने रहना महानता है और सकारात्मक सोच के साथ जीवन जीना ही वास्तविक समृद्धि है। यही गुण मनुष्य को समाज में सम्मान, परिवार में प्रेम और जीवन में स्थायी सुख प्रदान करते हैं।



हम जब 'निष्फल' होते हैं तब हमारे 'साहस' को पागलपन 'माना जाता है लेकिन जब हम सफल होते हैं तब 'पागलपन' को भी साहस 'माना जाता है..



जिसकी जैसी नियत वो वैसी कहानी रखता है,कोई परिंदों के लिए बंदूक तो कोई परिंदों के लिए पानी रखता है

पर्वो का उद्देश्य : विभाजन नहीं मिलन

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

भारत केवल एक भू–भाग नहीं, बल्कि सभ्यताओं, संस्कृतियों, मतों और परम्पराओं का जीवंत संगम है। हमारे देश में हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन सहित अनेक संप्रदायों के लोग रहते हैं। यह ऐतिहासिक सत्य है कि देश को आजाद कराने में सभी मतों के लोगों ने समान रूप से बलिदान दिये। किसी ने भगवा ओढ़ा, किसी ने हरा, किसी ने क्रूस धारण किया पर लक्ष्य एक था–भारत माता की स्वतंत्रता।

आज भी हम अपने–अपने मतों के अनुसार ईष्ट, पर्व और परम्पराएँ मानते हैं। हिन्दू समाज में रामनवमी, जन्माष्टमी जैसे अवसरों पर बच्चों को राम और कृष्ण के रूप में सजाया जाता है। विद्यालयों में भी इन पर्वों को सांस्कृतिक उत्सव की तरह मनाया जाता है। इसी प्रकार ईसाई समाज में क्रिसमस पर बच्चों को सांता क्लॉज के रूप में सजाया जाता है और यह भी कई स्कूलों में उत्साहपूर्वक मनाया जाता है।

यहां यह विचार स्वाभाविक रूप से मन में उठता है–यदि हिन्दू बच्चे सांता क्लॉज बन सकते हैं, तो मुस्लिम या ईसाई बच्चे राम या कृष्ण क्यों नहीं बन सकते ?

इसी तरह हिन्दू समाज मुस्लिम या ईसाई पर्वों में सक्रिय सहभागिता क्यों नहीं करता ?

यह सत्य है कि हर धर्म की अपनी आस्था, उपासना पद्धति और धार्मिक सीमाएँ होती हैं, जिनका सम्मान किया जाना चाहिए। किसी पर उसकी धार्मिक मान्यताओं के विरुद्ध आचरण थोपना उचित नहीं, परन्तु साथ यह भी सत्य है कि राम, कृष्ण, बुद्ध, नानक, ईसा मसीह–ये केवल किसी एक धर्म के नहीं, बल्कि मानवता के आदर्श चरित्र हैं।

राम मर्यादा का प्रतीक हैं। कृष्ण कर्मयोग और कूटनीति के। ईसा प्रेम और क्षमा के। नानक समानता और सेवा के। यदि बच्चों को इन महापुरुषों के जीवन से परिचित कराया जाए, उन्हें धार्मिक अनुष्ठान नहीं बल्कि सांस्कृतिक आदर्श केरूप में प्रस्तुत किया जाए तो इससे किसी की आस्था को ठेस नहीं पहुँचती। आज समाज में अविश्वास, दूरी और कभी–कभी कटुता का कारण यह भी है कि हक एक–दूसरे की परम्पराओं को जानने–समझने से कतराते हैं। जब बच्चे बचपन से ही केवल ''हम'' और ''वे'' में बंट जाते हैं, तो बड़ा होकर वहीं विभाजन समाज में दिखाई देता है।

यदि :– सभी मतों के बच्चे सभी मतों के महापुरुषों और पर्वों को जाने।

विद्यालयों में पर्वों को धार्मिक नहीं, सांस्कृतिक और नैतिक शिक्षा के रूप में मनाया जाएं।

परिवारों में बच्चों को यह सिखाया जाए कि सम्मान करना अपनाने से बड़ा होता है–तो भाईचारा स्वतः मजबूत होगा।

❁❁❁

'दीपक इसलिए वंदनीय है, क्योंकि वह दूसरों के लिए जलता है, दूसरों से कभी नहीं जलता..!

⁂

विश्वास का यह अर्थ नहीं, जो मैं चाहता हूं वही ईश्वर करेंगे। विश्वास का अर्थ यह है, ईश्वर वही* करेंगे जो मेरे लिए सही होगा।

⁂

विश्वास' जीवन की सबसे बड़ी 'पूंजी' है..उसके 'बिना' न तो 'प्रेम' संभव है और न ही 'प्रार्थना'..!

रिश्तों की खुशबू जीवन का सुकून

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

अपनों से दूरियाँ धुएँ की तरह होती है। जितनी बढ़ती जाती है, उतनी ही मन की घुटन बढ़ती जाती है। दूरियों की आग में रिश्तों की मिठास धीरे–धीरे राख बनने लगती है। वहीं अपनों की नजदीकियाँ धुंध की शीतलता के समान होती है। जितना हम प्रेम, अपनत्व और विश्वास के साथ एक–दूसरे के करीब आते हैं, उतना ही मन को सुकून, सुरक्षा और आत्मीयता का अनुभव होता है। संसार की सबसे बड़ी दौलत धन–संपत्ति नहीं, बल्कि अपने लोगों का साथ और उनका विश्वास है।

जीवन भर केवल एक बात सदैव याद रखिए – संबंध, रिश्ते और दोस्ती की नींव नीयत की सच्चाई पर टिकी होती है। जहां मन में छल, स्वार्थ या दिखावा होता है, वहाँ रिश्ते अधिक समय तक नहीं टिकते। लेकिन जहाँ नीयत साफ, हृदय निर्मल और भावनाएँ निष्कपट होती है वहाँ छोटे–छोटे मतभेद भी प्रेम के आगे स्वयं समाप्त हो जाते हैं। रिश्तों की मजबूती शब्दों से नहीं, बल्कि व्यवहार, विश्वास और संवेदनशीलता से बनती है।

किसी से किसी प्रकार की अपेक्षा किए बिना उसका भला करना ही सच्ची मानवता है। उपकार का प्रतिफल पाने की इच्छा यदि मन में हो, तो वह सेवा नहीं, सौदा बन जाती है। निस्वार्थ भाव से किया गया छोटा सा सहयोग भी किसी के जीवन में आशा की किरण जगा सकता है। प्रकृति भी हमें यही संदेश देती है कि वृक्ष अपने फल स्वयं नहीं खाते, नदियाँ अपना जल स्वयं नहीं पीती और सूर्य अपने प्रकाश का मूल्य नहीं मांगता।

आज के समय में लोग बड़ी–बड़ी उपलब्धियाँ प्राप्त करने की दौड़ में अपने ही लोगों से दूर होते जा रहे हैं। याद रखिए, जीवन की सबसे बड़ी सफलता वह नहीं जो केवल संसार को दिखाई दे, बल्कि वह है जिसके

कारण आपके अपने आपके साथ मुस्कुराएँ। यदि घर में प्रेम, सम्मान और अपनापन है, तो कठिन से कठिन परिस्थितियाँ भी सरल लगने लगती है। इसलिए समय रहते रिश्तों की कद्र कीजिए, रूठों को मनाइये, अहंकार को त्यागिए और संवाद का दीपक सदैव जलाए रखिए। क्योंकि जब जीवन की संध्या आती है, तब धन, पद और प्रतिष्ठा से अधिक अपने लोगों का स्नेह, उनका साथ और उनकी दुआएँ ही मनुष्य की सबसे अमूल्य संपत्ति बन जाती है।

किसी ने बहुत सुंदर कहा है– ''जो लोग फूल बेचते हैं, उनके हाथों में खुशबू अक्सर रह जाती है।" ठीक उसी प्रकार जो व्यक्ति दूसरों के जीवन में प्रेम, सम्मान, सहयोग और खुशियाँ बाँटता है, उसके अपने जीवन में भी सुख, शांति और आत्मसंतोष की सुगन्ध सदैव बनी रहती है।

आइये, हम अपने रिश्तों को समय दें, अपनो को महत्व दें, नियत को निर्मल रखें और बिना किसी अपेक्षा के प्रेम और सद्भाव बाँटते चलें। क्योंकि अंततः जीवन की सबसे सुंदर कमाई धन नहीं, बल्कि वे लोग हैं जो हमारे सुख–दुःख में सच्चे मन से हमारे साथ खड़े रहते हैं।

❁❁❁

'विचार और व्यवहार' हमारे बगीचे के वो फ़ूल हैं..जो हमारे...पूरे व्यक्तित्व को महका देतें हैं...

⁂

हर व्यक्ति केवल अपने दोषों को दूर कर ले तो ये धरती आज भी किसी स्वर्ग से कम नहीं।

⁂

संतान की परवरिश, किसी साधना से कम नहीं !!और माता पिता की सेवा, किसी अराधना से कम नहीं !!

संगति का प्रभाव

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन
(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

कबाड़ तोलते समय यदि कोई मक्खी तराजू पर बैठ जाए तो उसके बैठने से कोई विशेष फर्क नहीं पड़ता। लेकिन वही मक्खी यदि सोना तोलते समय उसी तराजू पर बैठ जाए, तो उसका मूल्य लगभग 50,000/– रु बढ़ा हुआ प्रतीत होता है। यहाँ मक्खी का वजन नहीं बदला, बदली है तो केवल उसकी संगति और स्थान ।

जीवन में भी यही सिद्धांत लागू होता है। हमारी पहचान केवल हमारे व्यक्तित्व से ही नहीं, बल्कि इस बात से भी बनती है कि हम किन लोगों के साथ उठते–बैठते हैं, किन विचारों को अपनाते हैं और किस वातावरण में अपना समय बिताते हैं। अच्छी संगति हमें ऊँचे विचार, श्रेष्ठ संस्कार सकारात्मक सोच और सफलता की दिशा देती है, जबकि बुरी संगति धीरे धीरे हमारे चरित्र, सम्मान और भविष्य को प्रभावित कर देती है।

सफलता केवल मेहनत से ही नहीं मिलती, बल्कि सही मार्गदर्शन और श्रेष्ठ संगति से भी प्राप्त होती है। यदि आप ईमानदार, कर्मठ, विद्वान और सकारात्मक सोच रखने वाले लोगों के साथ समय बिताते हैं, तो उनके गुण अनजाने में ही आपके व्यक्तित्व का हिस्सा बनने लगते हैं। उनकी आदतें, अनुशासन, व्यवहार और जीवन–दृष्टि आपको भी निरंतर आगे बढ़ने की प्रेरणा देती हैं। इसके विपरीत यदि हम नकारात्मक सोच, आलस्य, ईर्ष्या और निराशा से भरे लोगों की संगति में रहते हैं, तो धीरे–धीरे हमारा आत्मविश्वास, उत्साह और लक्ष्य भी कमजोर पड़ने लगता है। इसलिए अपने मित्र, सहयोगी और वातावरण का चयन अत्यंत सोच–समझकर करना चाहिए, क्योंकि यही चयन हमारे भविष्य की दिशा तय करता है।

प्रकृति भी हमें यही संदेश देती है। चंदन के वृक्ष के पास रहने वाले साधारण वृक्ष भी असकी सुगंध से महक उठते हैं, जबकि गंदे नाले में गिरने वाला निर्मल जल भी अपनी पवित्रता खो देता है। ठीक उसी प्रकार मनुष्य भी अपने वातावरण के अनुसार ढलता चला जाता है। इसलिए सदैव ऐसे लोगों का साथ चुनिए जो आपके मन में आशा जगाएँ, आपकी कमियों को प्रेमपूर्वक बताकर उन्हें दूर करने की प्रेरणा दें और आपके जीवन को उद्देश्यपूर्ण बनाएँ। याद रखिए, हीरे की पहचान जौहरी करता है और मनुष्य की पहचान उसकी संगति करती है। यदि संगति श्रेष्ठ है, तो साधारण व्यक्ति भी असाधारण ऊँचाइयों तक पहुँच सकता है।

''जीवन में हमेशा ऐसी महफिल चुनिए जहाँ विचार ऊँचे हो, संस्कार श्रेष्ठ हों और उद्देश्य महान हों, क्योंकि आपकी संगति ही आपके व्यक्तित्व, आपके सम्मान और आपके भविष्य की सबसे बड़ी पहचान बनती है।"



जो व्यक्ति सीधी और साफ बात करता है उसकी वाणी कठोर हो सकती है लेकिन वो कभी किसी को धोखा नहीं दें सकता।

❇

'संबंध, मित्रता एवं प्रेम' प्रत्येक के 'भाग्य' में होते हैं, परंतु..ये 'चिरस्थाई' वहीं होते हैं जहां इनको 'सम्मान' मिलता है..!!

❇

दूसरों की मदद करते हुए यदि दिल में ख़ुशी हो तो वही सेवा है, बाक़ी सब दिखावा है

विश्वास और संदेह का रिश्तों पर प्रभाव

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

मानव जीवन अकेले नहीं चल सकता। जन्म से मृत्यु तक मनुष्य रिश्तों के सहारे ही आगे बढ़ता है। माता–पिता, भाई–बहिन, पति–पत्नी, संतान, मित्र, पड़ौसी और सहकर्मी इन सभी रिश्तों को जोड़ने वाला अदृश्य सूत्र है–विश्वास। जब यह सूत्र मजबूत होता है, तो रिश्ते बोझ नहीं, बल्कि जीवन की शक्ति बन जाते हैं, परन्तु जब इसी स्थान पर संदेह प्रवेश कर लेता है तो वहीं रिश्ते तनाव, पीड़ा और संघर्ष का कारण बन जाते हैं।

विश्वास का मनोवैज्ञानिक महत्व–मनोविज्ञान के अनुसार विश्वास व्यक्ति को भावनात्मक सुरक्षा प्रदान करता है। जब किसी रिश्ते में विश्वास होता है तो व्यक्ति निडर होकर अपनी बात कर पाता है, अपनी कमजोरियां साझा कर सकता है और बिना भय के निर्णय ले सकता है।

विश्वास से – आत्मसम्मान बढ़ता है, मानसिक तनाव कम होता है, निर्णय क्षमता सुदृढ होती है, रिश्तों में स्थिरता आती है।

बच्चों के विकास में भी विश्वास की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिस परिवार में माता–पिता एक–दूसरे पर विश्वास करते हैं, वहां बच्चों में आत्मविश्वास, नैतिकता और संतुलित व्यक्तित्व विकसित होता है।

संदेह का मानसिक और भावनात्मक प्रभाव–संदेह व्यक्ति को भीतर से कमजोर कर देता है। संदेह करने वाला व्यक्ति स्वयं भी कभी शांत नहीं रह पाता। वह हर व्यवहार में छुपे अर्थ खोजता है, हर शब्द में चाल समझता है।

संदेह के कारण–निरंतर चिंता और भय, नींद और स्वास्थ्य पर प्रभाव, चिड़चिड़ापन और क्रोध, अवसाद और अकेलापन।

धीरे–धीरे संदेह रिश्ते को जांच–पड़ताल का केन्द्र बना देता है, जहाँ प्रेम की जगह पूछताछ और अपनापन की जगह निगरानी आ जाती है।

दाम्पत्य जीवन में विश्वास और संदेह–पति–पत्नी का रिश्ता सबसे अधिक संवेदनशील होता है। यहां विश्वास ही प्रेम, सम्मान और समर्पण का आधार बनता है।

जहां विश्वास होता है वहां छोटी गलतियाँ भी क्षमा बन जाती है।
जहाँ संदेह होता है वहां निर्दोष बात भी अपराध लगने लगती है।

दाम्पत्य में संदेह–संवाद को समाप्त करता है, शारीरिक और मानसिक दूरी बढ़ाता है, पारिवारिक कलह और विघटन का कारण बनता है।

अनेक परिवार केवल इसलिए टूट जाते हैं, क्योंकि बात करने के जाये मान लिया जाता है।

सामाजिक और कार्यस्थल के रिश्तों में प्रभाव–समाज और कार्यस्थल पर भी विश्वास सफलता की कुंजी है।

जहां विश्वास है, वहां टीम वर्क फलता–फूलता है।
जहां संदेह है, वहां प्रतिस्पर्द्धा शत्रुता में बदल जाती है।

किसी संस्था, समाज या राष्ट्र की प्रगति भी विश्वास पर ही निर्भर करती है। नागरिकों का व्यवस्था पर विश्वास और व्यवस्था का नागरिकों पर।

आतंकवाद और कटूता का जन्म अज्ञान, भय और आलगाव से होता है। जब कोई बच्चा बचपन से ही ''दूसरा मेरा शत्रु नहीं मेरा साथी है'' यह सीख लेता है, तो उसके मन में नफरत की जमीन ही नहीं बनती।

सांस्कृतिक समावेश सीधे आतंक को नही मिटाता, पर यह उस मानसिकता को समाप्त करता है, जहाँ से आतंक जन्म लेता हैं।

अतः भारत की आत्मा सह–अस्तित्व में है, न कि एकरूपता में। हम सबको एक जैसा बनने की आवश्यकता नहीं, पर एक–दूसरे को समझाने और सम्मान देने की आवश्यकता अवश्य है।

यदि हम अपनी–अपनी आस्था को सुरक्षित रखते हुए दूसरों की संस्कृति को जानने का साहस करे, तो भारत केवल भौगोलिक रूप से नहीं भावनात्मक रूप से भी एक राष्ट्र बन सकेगा।

यह भावना राष्ट्र निर्माण की भावना है– इसे जितना अधिक संवाद और शिक्षा में स्थान मिलेगा, उतना ही हमारा समाज सशक्त और शांतिपूर्ण होगा।

शब्दों की शक्ति और रिश्तों की गरिमा

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

मनुष्य के जीवन में शब्दों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। शब्द केवल ध्वनि नहीं होते, वे हमारे व्यक्तित्व, संस्कार और विचारों का दर्पण होते हैं। एक मधुर शब्द निराश व्यक्ति के जीवन में आशा का दीप जला सकता है, जबकि एक कटु वचन किसी के हृदय पर ऐसा घाव कर सकता है जो वर्षों तक नहीं भरता।

कहा भी गया है कि तलवार का घाव समय के साथ भर जाता है लेकिन कटु वाणी से मिला घाव अक्सर जीवन भर स्मृति में बना रहता है। इसलिए बोलने से पहले यह अवश्य सोच लेना चाहिए कि हमारे शब्द सामने वाले के मन पर क्या प्रभाव डालेंगे। क्योंकि मुख से निकला हुआ शब्द कभी वापस नहीं आता और वह अपना प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहता।

मीठी वाणी केवल दूसरों को ही नहीं स्वयं को भी सम्मान दिलाती है। विनम्रता, संयम और संवेदनशीलता से बोले गए शब्द रिश्तों में विश्वास, प्रेम और अपनापन बढ़ाते हैं। इसके विपरीत क्रोध, अहंकार और आवेश में बोले गए शब्द वर्षों पुराने संबंधों में भी दरार डाल सकते हैं।

इसी प्रकार रिश्तों की मजबूती केवल समझौते से नहीं, बल्कि आपसी समझ से होती है। जहाँ केवल समझौता होता है वहाँ मन में बोझ और असंतोष रह सकता है। लेकिन जहाँ एक–दूसरे की भावनाओं को समझने, सम्मान देने और स्वीकार करने की भावना होती है, वहाँ प्रेम, विश्वास और सम्मान स्वतः विकसित होते हैं। ऐसे रिश्ते समय की हर परीक्षा में अटल रहते हैं।

जीवन का वास्तविक सौंदर्य धन, पद या प्रतिष्ठा में नहीं, बल्कि हमारी वाणी की मधुरता, व्यवहार की सरलता और संबंधों की पवित्रता में है। यदि हम प्रतिदिन यह संकल्प लें कि हमारे शब्द किसी के लिए प्रेरणा बनेंगे, पीड़ा नहीं, हमारा व्यवहार सम्मान देगा, अपमान नहीं और हमारे रिश्ते समझ पर आधारित होंगे, केवल समझौते पर नहीं– तो हमारा जीवन स्वयं भी सुखी होगा और समाज भी अधिक सौहार्दपूर्ण बनेगा।

आइए, हम अपनी वाणी को मरहम बनाएँ, घाव नहीं, अपने व्यवहार को सम्मान का माध्यम बनाएँ, अहंकार का नहीं, और अपने रिश्तों को समझ, विश्वास एवं प्रेम की मजबूत नींव पर स्थापित करें। यही एक श्रेष्ठ जीवन की पहचान हैं।

❁❁❁

मीठे बोल बोलिए क्योंकि अल्फ़ाज़ों में जान होती है , इन्हीं से आरती, अरदास और अज़ान होती है , ये दिल के समंदर के वो मोती हैं , जिनसे इंसान की पहचान होती है...!!

⁂

किसी ने सही कहा है... हथियार केवल 'शरीर'' को घायल कर सकते हैं। किंतु शब्द 'आत्मा' को भी घायल कर देते हैं । इसलिए कोशिश करें मित्रों...अच्छा बोले,अच्छा सुने, और... अच्छा व्यवहार करें.

⁂

झूठे व्यक्ति की ऊंची आवाज सच्चे व्यक्ति को चुप करवा देती है,लेकिन सच्चे व्यक्ति का मौन झूठे व्यक्ति की जड़े हिला देती है

ड्यूटी और कर्त्तव्य में सामंजस्य

न्यायाधीश नगेन्द्र कुमार जैन

(पूर्व मुख्य न्यायाधिपति मद्रास एवं कर्नाटक उच्च न्यायालय)

सामान्यत हर व्यक्ति किसी न किसी रूप में एक–दूसरे पर निर्भर होता है। इसलिए आवश्यक है कि हम दूसरों के साथ वही व्यवहार करे, जिसकी अपेक्षा हम स्वयं अपने लिए करते है। ड्यूटी हमें अपने दायित्व का बोध कराती है, जबकि कर्त्तव्य उसे निष्ठा और जिम्मेदारी से निभाने की प्रेरणा देता है।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 51A प्रत्येक नागरिक के मौलिक कर्त्तव्य को स्पष्ट करता है– संविधान का सम्मान, देश की एकता–अखंडता की रक्षा, सदभाव बढ़ाना, पर्यावरण की रक्षा तथा प्रत्येक क्षेत्र में उत्कृष्टता के लिए प्रयास करना आदि।

वर्तमान दौर में अधिकांश लोग किसी न किसी रूप में ड्यूटी तो करना चाहते है, लेकिन उससे जुड़े कर्त्तव्य और जिम्मेदारी का निर्वहन नहीं करना चाहते। हर व्यक्ति अपने अधिकार, वेतन, सुविधा और सम्मान की अपेक्षा रखता है, लेकिन जब अपने कर्त्तव्य निभाने की बात आती है तो अनेक बहाने सामने आ जाते है।

चाहे वह सरकारी सेवा हो या गैर सरकारी हर जगह यह विचार दिखाई देता है कि हमे अपना अधिकार पूरा मिलना चाहिए लेकिन अपने कर्त्तव्य का निर्वहन कितनी ईमानदारी से किया जा रहा है– इस पर विचार कम होता है।

डॉक्टर की ड्यूटी और मरीज के प्रति कर्त्तव्यः

डॉक्टर से पूछा गया– ''आपका पेशा तो लोगों के स्वास्थ्य की रक्षा करना और मरीज की जान बचाना है। फिर कई बार महँगे टेस्ट और बिना आवश्यकता की महंगी दवाईयाँ क्यों लिखी जाती है?

कुछ डॉक्टरों का जवाब इस प्रकार हो सकता है– ''हमने डॉक्टर बनने के लिए वर्षों तक पढ़ाई की है, उस पर बहुत खर्च किया है। आखिर उस खर्च

की भरपाई कैसे होगी तथा इतने बड़े अस्पतालों का खर्चा कैसे निकलेगा" यही पर ड्यूटी और कर्त्तव्य का अंतर सामने आता है। डॉक्टर की ड्यूटी मरीज के हित को सर्वोपरि रखना है। यदि चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि से कोई महंगा टेस्ट आवश्यक है तो उसे करवाना उचित है, लेकिन केवल कमाई के उद्देश्य से अनावश्यक जाँच या महँगी दवा लिखना क्या डॉक्टर के कर्त्तव्य के साथ न्याय है?कमाई करना गलत नहीं है, लेकिन सेवा के नाम पर अनावश्यक आर्थिक बोझ डालना निश्चित रूप से विचारणीय है।

महंगे स्कूल के बाद भी ट्यूशन क्यों?

इसी प्रकार हम अपने बच्चों को महंगे से महंगे स्कूल में पढ़ाते है। भारी फीस अलग–अलग शुल्क और अन्य खर्च वहन करते है, लेकिन स्कूल से आने के बाद भी बच्चे को ट्यूशन भेजना पड़ता है।

तब प्रश्न उठता हैं– यदि महंगे स्कूल में पढ़ाने के बाद भी बच्चे की पढ़ाई पूरी कराने के लिए अलग से ट्यूशन आवश्यक है, तो फिर इतनी महंगी स्कूल फीस किसी कर्त्तव्य की पूर्ति कर रही है?

निश्चित रूप से हर बच्चे की आवश्यकता अलग हो सकती है और अतिरिक्त मार्गदर्शन कभी–कभी आवश्यक भी होता है। लेकिन यदि ट्यूशन एक अनिवार्यता बन जाए, तो हमें शिक्षा व्यवस्था और शिक्षक के कर्त्तव्य पर भी विचार करना चाहिए।

नेता और जनता के प्रति कर्त्तव्यः

इसी प्रकार हमारे नेता चुनाव के समय घर–घर दिखाई देते है। उस समय जनता से संपर्क, वादे और विश्वास की बातें होती है। लेकिन चुनाव समाप्त होने के बाद वही जनता अपने प्रतिनिधि को ढूँढती रह जाती है।

क्या जनता के प्रति नेता की जिम्मेदारी केवल वोट मांगने तक है?यदि जनता ने अपना वोट अपना कर्त्तव्य निभाया है, तो चुने हुए प्रतिनिधि का कर्त्तव्य भी है कि वह जनता की समस्याओं को सुने, क्षेत्र में दिखाई दे ओर अपने वादों के प्रति जवाब देह रहे।

समस्या केवल दूसरों में नहीं है:

लेकिन हमें केवल डॉक्टर, शिक्षक, नेता या सरकार कर्मचारी को ही दोष देना उचित नहीं होना चाहिए।
हमें अपने भीतर भी देखना होगा।

- कर्मचारी वेतन और सुविधाएँ चाहता है, लेकिन क्या वह पूरी ईमानदारी से काम करता है?

- शिक्षक सम्मान और वेतन चाहता है, लेकिन क्या वह प्रत्येक विद्यार्थी की प्रगति के प्रति समान रूप से जिम्मेदार है?

- डॉक्टर अपनी मेहनत और योग्यता का उचित मूल्य चाहता है, लेकिन क्या मरीज के हित को सर्वोच्च प्राथमिकता देता है?

- नेता सत्ता और सम्मान चाहता है, लेकिन क्या जनता के प्रति अपने वादों का कर्त्तव्य निभाता हैं?

- अभिभावक बच्चों से अच्छे परिणाम चाहते है, लेकिन क्या वे स्वंय बच्चों को पर्याप्त समय और संस्कार देते है?

- नागरिक सरकार से सुविधाएँ चाहता है, लेकिन क्या वह अपने नागरिक कर्त्तव्य का पालन करता है?

- स्कूल में बच्चों को प्रारम्भ से ही संविधान का ज्ञान होना आवश्यक है।

ड्यूटी बनाम कर्त्तव्य:

असल समस्या तब पैदा होती है जब ड्यूटी केवल नौकरी बन आती है और कर्त्तव्य केवल शब्द।

ड्यूटी हमें बताती है कि हमें क्या काम करना है, जबकि कर्त्तव्य हमें यह याद दिलाता है कि वह काम किस भावना और ईमानदारी से करना है।

ड्यूटी समय देखकर ड्यूटी पूरी कर लेना पर्याप्त नहीं है। उसमें ईमानदारी, संवेदना, जिम्मेदारी और सेवा, भाव का होना भी आवश्यक है।

अंततः सवाल हम सभी से है– जब तब ड्यूटी और कर्त्तव्य में सामंजस्य नहीं होगा, तब तक विकास वास्तविक नहीं हो सकता।

हमें केवल यह नहीं पूछना चाहिए– ''मुझे क्या मिलेगा?" बल्कि यह भी पूछना चाहिए– '' मेरी जिम्मेदारी क्या है?" ''मैं अपने हिस्से का कर्तव्य कितनी ईमानदारी से निभा रहा हूँ?" क्योंकि समाज केवल अधिकार मांगने से नहीं चलता, बल्कि अधिकार और कर्त्तव्य के संतुलन से चलता है।

कर्तव्य और अधिकार एक ही सिक्के के दो पहलू है– जिसमें एक का अधिकार है और दूसरे का कर्तव्य।

देखा गया है कि अधिकतर नागरिक बंधुओं ने अपने–अपने मकान के आगे के फुटपाथ स्वयं हेतु उपयोग में लिये गये हैं। इसके अलावा अपने–अपने कर्तव्य की अवहेलनाओं के कारण स्वच्छता, पर्यावरण, नियमों की अवहेलना तथा ट्रैफिक नियंत्रण में भी समस्या रहती है। जैसा कि ऊपर वर्णित किया है कि एक का अधिकार है तो दूसरे का कर्तव्य। जीओ और जीने दो का मतलब आपके जीने का अधिकार है, पर आपका कर्तव्य है कि दूसरा भी जीयें।

अगर प्रत्येक नागरिक अपने प्रत्येक कर्तव्य का निर्वहन ईमानदारी से करेगा तो दूसरे नागरिकों के अधिकार एवं मानवाधिकारों का हनन कम होगा।

अधिकार पाने की इच्छा सब में है, कर्त्तव्य निभाने की भावना कितनो में है?ड्यूटी तो मजबूरी में भी की जा सकती है, लेकिन कर्त्तव्य वहीं है जो अंतरात्मा से निभाया जाए। ड्यूटी रोजी–रोटी का साधन हो सकती है,

लेकिन कर्त्तव्य जीवन की सार्थकता है। जिस दिन व्यक्ति अपनी ड्यूटी को कर्त्तव्य–भावना से निभाने लगेगा, उस दिन केवल व्यवस्था नहीं–पूरा समाज बदलने लगेगा। केवल सरकार ही इन सभी समस्याओं का निदान नहीं कर सकती है, प्रत्येक नागरिक को भी पूर्ण रूप से भी सहयोग करने की आवश्यकता है।

अतः ड्यूटी और कर्त्तव्य में सामंजस्य ही अच्छे नागरिक और स्वस्थ समाज की पहचान है। जब हम अपने दायित्व को केवल काम न समझकर कर्त्तव्य– बोध और सेवा–भाव से निभाते है, तभी व्यक्ति, समाज और राष्ट्र उन्नति की ओर बढ़ते है।

'अधिकारों के प्रति जागरूक रहो और कर्तव्य के प्रति समर्पित रहो।'
'अनजान के प्रति संवेदनशीलता ही मानवता है।'

मोबाईल नम्बर– 9414066665



धैर्य वह गुण है जो तुम्हें हर तुफान के बाद भी स्थिर खड़ा रहने की ताक़त देता है।।

यदि 'सन्तुष्ट' एवं 'प्रसन्न' रहना चाहते हैं तो..'श्रेय' लेने की 'इच्छा त्याग' दीजिए..!!

समझदारी और परिपक्वता आयु के आँधीन नहीं होती,धैर्य और आत्मचिंतन द्वारा इसके कपाट किसी भी आयु में खोले जा सकते हैं।

अनुशासन कठिन जरूर लगता है लेकिन आदत बन जाए तो अच्छे परिणाम की गारंटी भी देता है....'

मोबाइल: बच्चों के लिए वरदान या अभिशाप ?

बच्चों के हाथों में मोबाइल देने से पहले, अपने हाथों से उनका बचपन मत छीनिए !

आज का विधार्थी बहुत होशियार, Informative व अच्छा IQ रखने वाला है, पर कम्प्यूटर संस्कार नहीं दे सकता । संस्कार तो माता–पिता, गुरूजन एवं अच्छी संगती से मिलते हैं। वैसे आज मोबाइल हमारी जिंदगी का अभिन्न हिस्सा बन चुका है। बड़े हों या छोटे, सभी इसकी गिरफ्त में है। माता–पिता अपनी व्यस्तता के कारण बच्चों को चुप कराने, खाना खिलाने या व्यस्त रखने के लिए उनके हाथों में मोबाइल थमा देते हैं। उन्हें लगता है कि इससे बच्चा शांत रहेगा, लेकिन वे यह भूल जाते हैं कि मोबाइल की यह आदत धीरे–धीरे उनके बचपन, सोच, व्यवहार और संस्कारों को प्रभावित कर सकती है।

बच्चों को मोबाइल नहीं, माता–पिता का समय चाहिए। उन्हें मोबाइल की कहानियाँ नहीं, दादा–दादी और नाना–नानी की प्रेरक कहानियाँ सुननी है। उन्हें मोबाइल की चमक नहीं, माता–पिता की मुस्कान चाहिए। उन्हें आभासी दुनिया नहीं, परिवार का प्यार और अपनापन चाहिए।

आज का बच्चा कल का नागरिक है। हम उसे जैसा वातावरण, व्यवहार और संस्कार देंगें, वह वैसा ही व्यक्तित्व लेकर समाज में आगे बढ़ेगा। यदि बचपन से ही उसे मोबाइल की लत लगा देंगे, तो उससे अनुशासन, संवेदनशीलता और पारिवारिक मूल्यों की अपेक्षा कैसे करेंगे ?

मोबाइल स्वयं न वरदान है, न अभिशाप । उसको सही उपयोग उसे ज्ञान, शिक्षा और विकास का माध्यम बनाता है, जबकि अनियंत्रित उपयोग उसे समय की बर्बादी, एकाग्रता में कमी और सामाजिक दूरी का कारण बना सकता है।

माता–पिता को समझना होगा कि बच्चों को केवल महंगे खिलौने, अच्छे स्कूल और आधुनिक सुविधाएँ देना ही परवरिश नहीं है। उन्हें समय देना, उनकी बातें सुनना, उनके साथ खेलना और अच्छे–बुरे का अंतर समझाना भी उतना ही जरूरी है।

आइए, हम संकल्प लें कि मोबाइल को बच्चों का साथी नहीं, जरूरत के अनुसार उपयोग होने वाला साधन बनाएंगे। दिन का कुछ समय परिवार के लिए निर्धारित करें, भोजन के समय मोबाइल दूर रखें और बच्चों के सामने स्वयं भी मोबाइल का संयमित उपयोग करें।

याद रखिए – बचपन दोबारा लौटकर नहीं आता, लेकिन बचपन में दिए गए
संस्कार जीवनभर साथ रहते हैं।
बच्चों को मोबाइल चलाना सिखाने से पहले जीवन जीना
सिखाइए, क्योंकि
मोबाइल स्मार्ट बना सकता है,
लेकिन संस्कार ही इंसान को महान बनाते हैं।

एक विशेष संदेश – बच्चो के हाथों मे मोबाइल देने से पहले माता–पिता एक बार यह अवश्य खोचें कि कहीं हम अपनी सुविधा के लिए अपने बच्चों का भविष्य तो दाँव पर नही लगा रहे हैं ?

Fading Indian Values in the Glare of Foreign Culture

Justice Nagendra Kumar Jain
Former Chief Justice – Madras and Karnataka High Court

Is going abroad becoming a licence to abandon our traditions? Justice Jain urges a return to the values that make us human

The growing distance of Indian youth from traditional values and family culture, especially after going abroad, has become a matter of serious concern, former Chief Justice Nagendra Kumar Jain has said. He emphasised that modernity should not mean giving up our cultural roots and values, which form the true identity of India.

In a recent article, Justice Jain shared an incident from a social gathering. While visiting a friend's house, he witnessed that the wife of his friend's younger brother, following the Indian tradition, touched the feet of elders and sought their blessings. However, her daughter-in-law, who lived abroad, did not consider it appropriate to touch feet and simply exchanged formal words before moving on. When asked, her husband explained, "She lives abroad, so she has forgotten Indian values. Please forgive her."

'Does modernity mean distancing from our traditions?'

Justice Jain questioned whether going abroad has now become a licence to abandon our values. He said that this is not an isolated incident, but a worrying social trend. While children go abroad, earn degrees and wealth, they gradually lose the humility, respect and family values that have always been the hallmark of Indian civilisation.

He said that is dismissing traditions like touching the feet as "old-fashioned", "regressive" or "unnecessary"?

'Times haven't changed, our backbone has weakened'

The former Chief Justice said that we often say, "Times have changed." But the reality is, times have not changed our backbone has weakened. Values are not a burden that hinders progress; they are the foundation of a better life. Western culture has its place, but blindly imitating it and losing our own identity is like losing our soul. Where "I" becomes bigger than everything else, "we" disappears.

Indian values are still admired abroad

Justice Jain pointed out that the very values we are leaving behind are celebrated abroad as "Indian values." He said that the strength of family. society and the nation is linked to values and sanskars.

He urged that the coming generations must be connected to Indian culture alongwith modern education and progress. "Abandoning values is not progress, it is decline. Bowing with respect is not weakness; it is the strength of a culture."

- **Values are not clothes that can be taken off when we change countries. They are an inner discipline that keeps a human being truly human.**

- **If our future generations become only foreign citizens and are left with no Indian values, history will not forgive us. Civilisations survive not by weapons, but by values and sanskars.**



'' अधिकारों के प्रति जागरूक रहो
कर्तव्यों के प्रति समर्पित रहो । ''

'' अनजान के प्रति संवेदनशीलता ही
मानवता है ।''

न्यायमूर्ति एन.के.जैन

Justice Nagendra Kumar Jain
Former Chief Justice Madras & Karnataka High Court
Former Chairperson Himachal Pardesh & Rajasthan
State Human Rights Commission
Lokayukta (Additional Charge), Himachal Pardesh,
President : Digambar Jain Atishay Kshetra Shri Mahaveerji

website : justicenagendrakjain.com
justicenagendrakjainfountrust.com

JAYNA PRINTERS, JAIPUR. 9314643738